

सेना यह ग्रंथ को। श्री आचारिजी महाराष्ट्र के हृदय को आसय। उन कृपा ने निरस्त
१७३ को पोहो। देवी स्ति के उद्धारार्थ यो मे से देह न हो। यह सिद्धांत जानने। सु
 ॥ इति श्री वल्लभाचार्य विरचिते सेन्यास भोगोपग्रह को टीका भाष्ये नमः ॥
 ॥ अथ निरोधनसारा ग्रंथ को टीका भाष्ये नमः ॥
 अवप्रथम स्तोत्र मे गला चरण को कहते हैं। **स्नेह** ने मो स्तुत स्मृती लोप
 भक्तानाम ब्रजवासिनां। ततः श्री वल्लभाचार्य स्वक यत्नो निरोधक त
यको अर्थ। ने मला चरण में श्री हरि गव जी कहते हैं। जो न व श्री कृष्ण ब्रज में
 नंदराय जी के घर प्रगट होके। जो ब्रज संबंधी लीला करी। तब अपन भक्त जो
 भक्त। तथा ब्रज में श्री नंदराय जी। जो सादा जो सरवागोप सवन को निरोधक
 श्री गोकुल को। तिन को में परम प्रेम सोनमस्कार करत हैं। सो साक्षात् श्री कृष्ण
 भावत्त्व कस्वस्व श्री वल्लभाचार्य जी फल भूतल में प्रगट हो। स्व को यनाम
 पेन श्री कृत भक्त न के। निरोधक त हैं। सो निरोध को प्रकार जानत हैं। श्री
 नाजाने निरोध के सरोप। सो यह जतावे के लोप। श्री वल्लभाचार्य जी निरोधक
 सन ग्रंथ आप्रगट को। से सोम हो दा श्री आचार्य जी महाराष्ट्र आप्रगट को
 के चरण कमल को में वार वार नमस्कार करत हैं। या प्रकार मे गला चरण को
 अवप्रथम स्तोत्र को कहते हैं। **श्री**। यह दूर यशोदा नंद दास नो बंगो
 गोपिका नाच यदुसं त दसं स्यान्म मङ्गलित। **अथ**। अवप्रथम
 यशोदा जी को। पाछे नंदराय जी को। ताके अर्थ कहा। नरा कहते हैं जो
 सास्त्व में कहते हैं। जो पताते माता बड़ी। जो कष्ट कार्य पिना करत हैं। श्री
 माता उर पुत्र का बजे। श्री पुत्र माता को आजा माने ता देव नरा। श्री
 ताते माता को स्तुत। उर विषे धिता सो सहस्र गुणो अधि कट। श्री पिता न
 ताका संबंध रहे। अधि क कर जो मला के उर ते प्रगट रहे। नो ते उर ते स
 माता को आत्मात। नरा को कहते नो श्री ठाकुर जी ता को ई के गर्भ में आविर्भू
 नो श्री यशोदा जी के गर्भ में के से आय। तहां कहते हैं। नो लोकि को वसां जो
 लक जन्म लेन। सो प्रकार तो श्री ठाकुर जी में से भवे नहि। श्री अलौकिक
 वसंध सो। नो श्री नंदराय जी के घर। श्री यशोदा जी के उर ते प्रगट भये
 नो के २ वरी पाछे भाया प्रगट हो। सो मापा के आवरतने प्रभु के स्वरूप नान्य

नाहो जात। ताते माता नो आविर्भूत हो। तिन को निरोध के अर्थ नयान दाय जो
 तिन को अर्थ के निरोध करते हैं। श्री जो नंदराय। श्री ब्रह्म गोप वे उ चेतो।
 तथा नंदराय सदस दृष्ट गोपो तिन सवन को निरोध करते हैं। सो प्रकृत ते हैं
 सो प्रथम अव श्री ठाकुर जी ब्रज विषे प्रगट भये। तब सवन को दसन कर यह भाव
 उत्पन्न भये। नंदराय सादा जो नो उर भाव में मग्न भये। तब सब सरय भाव में मग्न
 भये। गोपो जनपति भाव में मग्न भये। पर तु निरोध अवरो नहि भयो। तब श्री ठा
 कुलो न विचारो। जो मेरे दसन ते भाव तो सब को भयो। पर तु निरोध अवरो
 नहि भयो। तोन यह भाव निरोध विनारे हो नहि। सो निरोध का वे के लोप वा
 ली लीला करन लोप। सो बाल लीला करन में कस के पदोप गस्वस्व आय। सो तिन
 को नारे। भक्त को निरोध को। जे से पूतना कपट कर के अर्थ। सो आविर्भूत रूप
 ताको नो। सो जहां ताई श्री धा हो। तहां न निरोध न देण। सो को न प्रकार
 तहां ताई पूतना को उपद्रव नहि भयो हने। तहां ताई नंदराय सादा वृज भक्त सवन के मन
 के को दसन में चिंत नहि हने। जो बाल के बहत जनन को। सहज प्रेम हो
 श्री जवत पूतना को उपद्रव भयो। ता दिते नंदराय सादा वृज भक्त सवन के मन
 में चिंत बहत भरे। जो या बाल के को अके लोपो गो नो नहि। ये तो हमार सवन के
 प्राणें। ताते अथ पर श्री ठाकुर जी में मन लागे। या प्रकार निरोध कायो तब
 पाही भंति जा जो गदसमो। न्यो न्यो सब भक्त न के भरे। श्री मे म श्री ठाकुर जी
 की लीला देख के भयो। या प्रकार सब दे भगवत पर भरे। तब श्री ठाकुर जी ने
 विचार को। जो श्री नंदराय यशोदा जी ब्रज भक्त को तानि रोध सिद्ध होत
 श्री ब्रज संबंधी जो बजे। गाप भय ब्रज के वन विषे प्रगट पंछी न के निरो
 ध को न प्रकार सिद्ध होणो। श्री यह ब्रज के जी रहे। सो पा को पर भि प्रपरे। यह
 विचार के श्री ठाकुर जी वन में ब्रजो चारन लीला को अंगे कर करत भयो। सो य
 न में जंगम स्थावर सब को निरोध भयो। ताही ते वृणु गीत में ४ पर कहें। जे लो
 नार सुन गो बड़े न पुलकित भये। तस्मै ते मधु अवत भयो। श्री गाय व न मुख
 में लेत। बछा दूध पीव नो भूल गयो। नृगारि कपु सब अपने चंचलता छो
 ष डो होत रहे। तसो मोन ता को प्राप्त भयो। या प्रकार सम स्त ब्रज को विरोधो
 द भयो। जो गो चारन लीला न करत। नो सवन को निरोध सिद्ध न होत। तहां ताई

॥ निरा ॥ करत हं **॥** जोनुमदह कोहते **॥** उहां ब्रज से यंधी भक्तन में तो अप्रप सपुत्र
॥ २५ ॥ विप्रयोग दुख कोरसे ते **॥** लोकोरक कराका गोको हउ **॥** तहां कोहि संहरक
जोधीने दराय जो यमोदा जो **॥** गोप वृध गोपी रक दुख तो इन को केह **॥** ये
गोपीजन जो अंतरंग ब्रज भक्त **॥** एक दुख इन को केह **॥** सो न्यासी न्यासी प्राप्ति
केंस को रेसे काहे न केह **॥** जोधी गफुर जो के मिले वो को दुख नंद यशोदा
कोहे **॥** गोपी सरख नह कोहे **॥** और गोपी जनह कोहे **॥** नति हरव तो यराचो
सोयह करो चरिये **॥** जो ब्रज भक्तह **॥** तिन को दुख हम को दुह **॥** नहां कलने
जोस मत्त्व ब्रज में गोपी जन के दुखह **॥** सो अनिर्वचनीयेत **॥** और यज
ननो जो यथाधिका **॥** दुख सुख सवन को ब्रज में हे **॥** ताते हमारे सब स
यथाधिका दान करनो **॥** तो ताते हम दोइ विप्रयोग रस को प्रार्थना कोये
यह जताये के लीये प्रथम नेह यमोदा के दुख को प्रार्थना कोये **॥** पाछे ब्रज
तन को दुख को प्रार्थना कोये **॥** एक करी काकी ऐसी डली भक्त को कोहे **॥** ता
या स्नोक में यर सिद्धांत भयो **॥** जो यर विप्रयोग रस एसी डली भे **॥** सो धी
चार्ये जी को कानि ते काह को प्राप्त होतह **॥** या प्रकार प्रथम स्नोक में दुख को
प्रयोग त्म कना को प्रार्थना कोये **॥ २५ ॥ श्री को ॥** गोदुले गोपिकां च सर्व
ब्रज बसिनां **॥** यत्सुखं समभूतमे भगवान् किं विधास्यति **॥ २६ ॥ याते ॥**
अब ऊपर प्रथम स्नोक में विप्रयोग दुख को प्रार्थना करो **॥** तहां वारी संहरक
जो श्री गुरु जी तो परम हयालह **॥** उन सो जो मागे सो मिले **॥** तब तुम तो
खमागो **॥** सो श्री गुरु जी दुख हीहें हिंग **॥** और श्री गुरु जी को दियो लो
त्यर **॥** सो फेर काह की साम धेनाह **॥** जो अन्याय कर सक **॥** सो श्री गुरु
अब दुख दान कोये **॥** जो श्री नंदराय जो यमोदा जो गोपीजन को विरह तो
सो या भाति तुम्हारे जो व को तुम्हारी कानि सो सिध होपगे **॥** तब जो सर
रसादिक लीला मुख्य फल **॥** जो नंद यमोदा जो वं बाल लीला को सुख
और सरया गोप संग खेजतह **॥** सो रित्यादिक संयोग को सुख **॥** तोनुम को
याह तुम्हारे सब कन को नहोमगे **॥** सदा विप्रयोग रहेगो **॥** जो तुम ने मायो
सब वे तुम्हारे जीवन को संयोग रस को सुख न भयोतो **॥** तुम्हारे पुष्टि मा
कोहेते हरेगो **॥** उहां श्री गुरु जी पुष्टि रस रसादिक लीला में सध की

ताते वे पुष्टि भक्त भये **॥** सो संयोग रस तुम्हारे सब कन को नहोमगे **॥** तो तुम्हारे
पुष्टि मागि कोहेगो **॥** यह बाहो आसंका को **॥** तहां कहतेहें **॥** जो उहां श्री गुरु
जो श्री नंदराय जो को **॥** जो सो दा जो वं बाल लीला को सुख दीये **॥** पाछे गाप च
रावन जान लागे **॥** तबीव प्रयोग सुख दीये **॥** तैसे तो ब्रज भक्तन को रात्र के रसा
दिक लीला में **॥** अनेक सुख संयोग में दीये **॥** पाछे दिन को गोचारन लीला में इन कूं
विरह दीये **॥** सो सब ब्रज के लोगन को विरह पात दीये **॥** जो संयोग रस हृद होइ
कोहेते **॥** एक तो बार बहुत सानि गीरवीजे तो पद भरे **॥** पाछे सब वस्तु में ते अरुच
होय जाय **॥** और भूख लागे नव देजे **॥** तो सो मागे को सदा अधिक आवे नैंसे
हें संयोग रस तो **॥** श्री ठाकुर जी प्रथम सब को करवाये **॥** परंतु अगे प्रेम लज्ञा
भक्त को दान करनो **॥** सो इत नैंही में सब इंदो मन ब्रह्मां जाय **॥** तो अगे मु
ख्य फल को अनुभव होय **॥** ताते विरह कराय **॥** ताते विरह मुख्य फल हो **॥** ताते
विरह करके सब संयोग रस को अनुभव होतह **॥** ताते हम उन ब्रज भक्त के
दुख जोहें **॥** विरह तारी को प्रार्थना करतहें **॥** उह दुख के काका को हम पाइके
हम को सकल संयोग को लातोह **॥** ताको अनुभव होइगे **॥** और या पुष्टि माग
जो अंगो कृत जीवहें **॥** तिन को जब विप्रयोग को कराका प्रहोइगे **॥** तब उन
हें को समस्त संयोग त्म कलीला को अनुभव होइगे **॥** ताते हम विप्रयोग को
प्रार्थना करतहें **॥** परी हमारे मुख्य फलहें **॥** सो श्री आचार्य जी प्रथम दुख को
प्रार्थना कर **॥** अब सुख को प्रार्थना कातेहें **॥** जो श्री गुरु ल में श्री नंदराय जी
यमोदा जो गोप सरया गाय गोपी जो ब्रज भक्तन या सपस्त ब्रज संवेधो जो प
दायेहें **॥** जितने जोयेहें **॥** तिन सबन को श्री ठाकुर जी को संवेधेहें **॥** सो श्री ग
ुरु जी दोषो हरलीला में परहिवोयेहें **॥** श्री यमोदा जो मारन के अर्थ **॥** उम
ल सो बाधेहें **॥** तापें ऊखल का ठकोहें **॥** सो ब्रज को काठेहें **॥** तापें पद सचन के
जो ब्रज के काठे में वेधोहें **॥** तो ब्रज के चेतन्य जोयेहें **॥** उन के वसरतो मा
में कहा कहना **॥** और श्री भागवत में श्री वेदावन में ब्रह्मन को काइ **॥** श्री गुरु
जो श्री बलदेव जी जित बहुत कोयेहें **॥** ताते ब्रज भक्त भगवद संवेधीहें **॥** सो
भगवरी गायेहें **॥** वे देखेगो कुल के दुख ज **॥** तथा धन धीन वं सरप करंग
नि सो ब्रज के सब को जो सुखहे **॥** सो मो को कृपा करेहें **॥** या प्रकार श्री

॥ निरुद्ध ॥ आचार्यजी महाप्रभु प्रथम दुख को भावना करी ॥ पाछे ब्रज संबंधी सुख को
 ॥ १०६ ॥ धिना करी ॥ तहां बाढ़ी आस का करी ॥ जो ब्रज में तो नंदराय जी य सो जानै ॥ तया
 पसरवा भक्त त्यागि सवन को प्रथम श्रीठाकुर जी संयोग रस को अंग
 कायो ॥ पाछे विप्रयोग रस को अनुभव कायो ॥ सो पचाधारि में प्रसिद्ध है ॥ अंग
 उन तो अपने उष्टि मार्ग भक्त न केनीये ॥ प्रथम दुख को प्रार्थना करी ॥ पाना
 उष्टि उष्टि मार्ग के फल में ॥ और ब्रज भक्त के उष्टि मार्ग के फल में विरोध
 तेह ॥ और आचार्यजी महाप्रभु कहत हैं ॥ उहा ब्रज संबंधी सब पदार्थ अलौकिक
 हैं ॥ और निर्देय जीव हैं ॥ सो आधुनिक नीजी में कहें ॥ जो श्रुति रूपि न
 नित्य सिध्या ॥ इत्यादि कौ गोपी ॥ जो सोहा जो धरा प्रधी ॥ नेदराय जी अंग
 सरवा गोप सब देवता हैं ॥ पक्षी पुनः प्रवर हैं ॥ और अनेक काल सो प्रभु के निज
 को आतिरत ॥ सोत पहलें ब्रज के जीवन को ॥ संयोगात्मक सुख देया ॥ पाछे
 प्रयोग स्वरों के संयोग सहर कोय ॥ सो नित्य संयोग रस और विप्रयोग रस
 और आकाल काल करि दुसंग ॥ अन्या अपकार जीव श्रीठाकुर जी को भूल गये
 और अपने स्व रूप को भूल गये ॥ ताते श्रीठाकुर जी तो विद्युत्प्रेर ॥ तो
 योग रस या को सिध होना बहन की दन है ॥ और श्रीठाकुर जी ते विद्युत्प्रेर
 न भये ॥ ताते विरह ना होत ॥ अज्ञान कर के लौकिक सक्ति होत ॥ तो
 हम इन जीवन के निमित्त ॥ पहलें विप्रयोग करा का को प्रार्थना कीनी ॥ सो
 प्रयोग जब यह अधुना क जीव को प्रभु दान करें ॥ तब या जीव को यर ज्ञान
 जो में तो प्रभु को दास ह ॥ सो मो को तो पहलौकिक ॥ श्रीठाकुर जी के उल्लास
 बाढ़े ॥ पहलौकिक कर के पाछे श्रीठाकुर जी के मिलने की आति होत ॥ और
 लौकिक सक्ति सब धूर जायगी ॥ पाछे जब व्यसनो अवस्था सिद्ध होत ॥ त
 वपा को संयोग रस को चरंच छुटोत ॥ ताके पाछे अत्यंत विरह होत ॥ त
 ना विरह की तन्मयता होत ॥ तब या को संयोग रस को लोला सति अ
 भव होत ॥ ताते पर कहें यह जताये ॥ जो विप्रयोग विरह विना संयोग रस
 को प्राप्ति नही ॥ ताते हम यह अधुना क जीव के निमित्त ॥ पहलें विप्रयोग की
 र्थना कीनी ॥ पाछे संयोगात्मक सुख की प्रार्थना कीनी ॥ या प्रकार कर के श्री
 ठाकुर जी ॥ उहा जी को ब्रज जो श्रीगोकुल को पठये ॥ तब अनि विचनो

विरह
 भक्त को सुख भयो ॥ सो कहत हैं ॥ पाप्रकार ॥ सो क को वरान भयो ॥ और क
 नेह ॥ सो क ॥ उहा वरान न जानत उत्सव पसु महान पया ॥ उहा वरान गोकुल बात था
 मेहन सो क चित ॥ ॥ या को अर्थ ॥ अरु अर प्रथम ब्रज संबंधी दुख ॥ विरह रूपता
 को प्रार्थना करी ॥ पाछे ब्रज संबंधी संयोगात्मक सुख की प्रार्थना करी ॥ तहां बाढ़ी
 जो श्रीठाकुर जी जब ब्रज में रहे ॥ ११ वरस तारि संयोग भक्तन को रहो ॥ और वनान
 र के विप्रयोग लो ॥ पाछे जब श्रीठाकुर जी मधुरा पधारे ॥ तब तो विद्युत्प्रेर ॥ सो उष
 संयोग विना के संरेत ॥ और जब विप्रयोग दूगयो ॥ तब पहलें जो संयोग ॥ तया वि
 प्रयोग का निरोध भयो ॥ ता को नास होत ॥ तब श्रीठाकुर जी को प्राप्ति के संरे
 रंग ॥ पहलें संदेह को ॥ तहां कहत हैं ॥ जो श्रीठाकुर जी मधुरा पधारे ॥ सो तो ब्र
 ज भक्तन को निरोध अंस दू कर के लीये ॥ कहते ब्रज में श्रीठाकुर जी य सो
 दाजी के प्रग भये ॥ और मधुरा ते पधारे देव को जीते प्रग होत ॥ सो दा स्व
 प को स्वयंता नान स कहो र मये ॥ तहां ऊपर तो सब के देवन मया दा उष्टि ॥ और
 भीतर उष्टि उष्टि ॥ सो सब स्वरूप भाव में वरान है ॥ सो श्रीठाकुर जी ब्रज में समस्त
 भक्तन को संयोगात्मक विप्रयोगात्मक सुख दे के निरोध कोये ॥ और भक्तन के
 हर के सब पदार्थ को निरोधने ॥ रास पचाधारि में भयो ॥ देह रूपा प्रकार सब
 को निरोध भयो ॥ और मन के निरोध में कच्छ कर दिग ॥ ताते श्रीठाकुर जी
 के संयोग में तो दाहर मरा सिध भयो ॥ पंचाधारि में अत्यंत ध्यान में कच्छ मन को
 निरोध भयो ॥ पूरान ही भयो ॥ कहते ॥ जल स्थल लीला जब पंधारि में कर के
 तब श्रीठाकुर जी ने करे ॥ जो तुम अवघर जाउ ॥ तब भक्तन ने श्रीठाकुर जी सो क
 हो ॥ जो हमारे पति उच मान पिता पूछेंगे ॥ तब हम करा को ॥ तब श्रीठाकुर जी
 बोले ॥ जो वे तुम को इहां आये न जानेंगे ॥ तुम सुख न जाउ ॥ सो पर पूरान मन
 के निरोध में कसर होत ॥ जो श्रीठाकुर जी के मे कच्छ है ॥ ताते उच माता पिता की
 उच आर ॥ तब श्रीठाकुर जी मन के निरोध करन के निमित्त ॥ श्रीठाकुर जी सब
 के देय तमधुरा पधारे ॥ तो तो मया दा उष्टि न ॥ और श्री य सो दा जी के च प्रग
 भयो ॥ जो भावात्मक उष्टि उष्टि स्वस् ॥ सो तो ब्रज भक्तन के रूप में स्थिर भयो
 सो ब्रज भक्तन को वराना हो कहते ॥ उपर प्रसिद्ध तो रश्मि नही ॥ सो अत्यंत
 तो वीर भयो ॥ तो विरह कसो नही जाय ॥ अतः कान में भयो ॥ ता कर के पूरा

॥ निरोध भयो ॥ सो नव मूर्छी विरह का केंतोंय ॥ तब श्री बाकुर जो उनही की हृदय
 ॥ २७५ ॥ ते प्रगट होया ॥ सब लीला करे ॥ ता आधार का के देर की स्थिति रहो नहि ॥ तोर
 मो अवस्था होय जाय ॥ सो ज व पाछे उनको चेत न्यता होय ॥ तब स्थित हो पाय
 ठाकुर जो उन के हृदय में ॥ सो भक्त यद जो न हो ॥ जो श्री बाकुर जो रमोर पास
 ताते भक्तन को यद दोष बुद्धि श्री बाकुर जो में रहे ॥ जो हम को छोड़े श्री बाकुर जो
 मधुरा पधारे ॥ सो दोष हर करे के लीये ॥ श्री बाकुर जो विचार कोये ॥ जो इन भक्त
 को दोष कैसे हर होयगा ॥ में तो उनके पास रहत हों ॥ सो पर वश भारो होये ॥ सो
 गवरी के संग विना दूर न होय ॥ यामें यह जतये ॥ जो भगवान सब के हृदय में
 परं भगवरी के संग विना जाने न जाय ॥ यह जान के श्री बाकुर जो ॥ अपने पास
 प्रिय अंतरंग भक्त सखा उद्धव जो तिन को पठाये ॥ सो प्रथम तो श्री कृष्ण ने श्री नित्य
 यजी के घर आयो ॥ सो के सेहें ॥ उद्धव जो जिन के आयते ब्रज में बहुत आने दूषये
 सो नंद पसाह जो को प्रेम देखि के ॥ उद्धव जो बहुत प्रसन्न भये ॥ पाछे दूसरे दिन
 त काल गोपिन सौ मिले ॥ तब गोपी जन से कात ले जाय अपने प्रिय को सो तब
 पूछत भई ॥ अत्यंत विरह सहित सो उद्धव जो गोपीन को प्रेम देखि के ॥ चित्र
 ररे ॥ तब उद्धव जो ने कही ॥ जो नुम से सो विरह को कात हो ॥ श्री बाकुर जो तो तु
 र पास होतें ॥ तुम अंतः कान में विचार के होये ॥ सो तब गोपीन के मन को पुरा
 रोध सिध भयो ॥ ताहीने श्री आचार्य जो महा प्रभू कहत हैं ॥ जो परले स्ना के में
 ब्रज भक्तन के विप्रयोगात्मक विरह को प्रार्थना कीनी ॥ दूसरे स्ना के में संप
 गात्मक सुख को भाव ना कीनी ॥ अव तो सरे में केवल विप्रयोगात्मक उद्धव
 अप सो ब्रज भक्तन को कहा दसा भई ॥ सो रस के कनका को प्रार्थना का
 जो मो को कवि सिद्ध होयगा ॥ सो उह समय के सोहे ॥ जब उद्धव जो ब्रज को घेले
 और उद्धव जो के सेहें ॥ उत्सव हें ॥ सो उत्सव कहा जो परम आनंद होय ॥ सो धी
 गो कुल में आवत हो परम आनंद भयो ॥ काहेले महा सुभावे ॥ भगवरी प्रथम
 श्री नंद राय जो के घर आयो ॥ सो सगरी रात्र परम आनंद में ॥ श्री बाकुर जो को
 गावत वीली ॥ पाछे दूसरे दिन बृंदावन में गोपी जन सो ॥ जो सरे स पूछते में
 महीना वीते ॥ सो सार सगरीन के हृदय में भसी हते ॥ सो सब संयोग स विप्र
 योग स होऊ प्रगट भये ॥ सो सब सन में उत्त मोत महे ॥ नारद को क राका

आचार्य जो महा प्रभू कहत हैं ॥ जो हेना बनी को कव प्रप्रेत होगी ॥ यह निरोध को प्र
 का करे ॥ तो ते विप्रयोगात्मक हो सुख हो ॥ ता के अंतर ह संयोग हो सब हो ॥ पा प्र
 का ॥ स्ना के को निरूपन भयो ॥ प्रव और कहत हैं ॥ स्नाक ॥ महता कृपा पावत
 का ॥ स्ना के को निरूपन भयो ॥ प्रव और कहत हैं ॥ स्नाक ॥ महता कृपा पावत
 भगवान दय विधायि ॥ ता वर नंद से हो ॥ कोर्त मानः सुखायते ॥ ४ या को अर्थ
 अत्र अत्र स्ना के में ब्रज भक्तन के निरोध को प्रकार कहे ॥ तामें विप्रयोगात्मक
 फल व तोये ॥ ता वर नंद से हो ॥ कोर्त मानः सुखायते ॥ ४ या को अर्थ
 सिध हो ॥ और आधुनीक जीव को मन तो लौ के का सो कहें ॥ सो पुशुवत कलि ॥
 का के जीव हो रहे हैं ॥ तिन को ब्रज भक्तन को भाव के से सिध होयगा ॥ इनको
 ता वयोग विप्रयोग का को जान न होतें ॥ और निरोध को साध न करूना तो
 ते निरोध की कला बान रहे ॥ और तुम तो निरोध के पाछे फल दिसा की वान कहे
 तो यह फल दसा तो उत्त मोत महे ॥ ता ते उद्धव जो हृदय भगवरी हें ॥ सो ब्रज भक्तन
 को भक्ति को महात्म जानें ॥ और जीव को कोल प्रकार निरोध सिध होय ॥ सो निरोध
 के साधन कहा ॥ और निरोध सिध भो हो एता की कृपा कहा ॥ और फल कहा ॥
 यह को सिद्ध करे ता कहत हों ॥ जो पर प्रथम ब्रज भक्तन को सिध करे ॥ सो
 सब जीवन को फल साधन कहत हों ॥ सो पा भाव सो कानो ॥ जो जे से उद्धव जो भा
 व होतें ॥ परं ब्रज भक्तन को रित को प्रेम मल साणा भक्ति को रव वन रनी ॥ सो व
 ज भक्तन शोते रव के को ॥ जो आज ताई न को रसे सो भक्त भयो ॥ न का ह को
 प्रभु से सा दान दोये ॥ ता को री के दे जो ब्रस शिवादि र वर भक्त हों ॥ और स्ना
 ह अंतरंग भक्त हें ॥ सो तुम ब्रज भक्तन में कला अधि क भक्त हों ॥ ता कहत हें ॥
 जो शिव ब्रस री क व भक्त हें ॥ सो आत्मा पर भक्त हें ॥ काहे ते परमात्मा पर न हो
 अपने सुख के निमित्त भजन करत हें ॥ अपने आत्मा प्रसन्न कावे के लीये ॥ और
 शास्त्र को रं भक्त हें ॥ और ब्रज भक्त हें ॥ सो परमात्मा पर भक्त हें ॥ अपने आत्मा के
 लोपे भक्ति को जतन नारी करत हें ॥ श्री बाकुर जो जो परमात्मा तिन के से उ
 र का वे के निमित्त भक्ति में तत्पर हें ॥ ता ते सब ते उत्त मोत भक्त हों ॥ ए सो
 ब्रज भक्तन की भक्ति देख के ॥ उद्धव जो परा प्रार्थना कोये ॥ जो मो को पे सिद्ध
 अर्थ होय ॥ स्नाक कहा ॥ आसा न हो चार गोरण जघां मरुत्या बृंदावन ॥ किन
 पि ग्लम लोष धीना या दुस्त्या ॥ स्वजन नार्य पथे चरित्वा भे जु उरुं दे पर

॥ निरु ॥ बींशुविभिर्भि भृग्वान ॥ यह करे जो जेसें ब्रज भक्त हैं ॥ तन के चरागा कमल को
 ॥ १७७ ॥ जोरु सो अत्यंत दुर्लभ हो ॥ तन के प्राप्त के अर्थ श्री वंदावन को प्रेम में ॥ यम
 नाम घासे में फल तरे ॥ नाम अने प्रकार की आयधी हैं ॥ नाम एक में सावे ॥ तन
 चरागा विंद को रज को संबंध भयो ॥ तहां करे ॥ ब्रज भक्तन के चरनन को प्रार्थना करी
 हो करत हो ॥ तहां करत हैं ॥ जहां ब्रज भक्तन के चरनन को रज को संबंध भयो ॥ तहां
 श्री ठाकुर जी के चरन कमल की प्राप्त हो चुको ॥ यो में संदेह नहीं ॥ तहां करे ॥ तन
 न वंदावन की आयधी होवे को प्रार्थना करी ॥ सो वें ॥ और वें ॥ वें ॥ वें ॥ तन
 पूल रत्नाद ता को प्रभू अंगीकार करतें ॥ तहां भक्तन की सखी हा सो होवे को प्रार्थना
 वें न करी ॥ तहां करतें ॥ जो दासी की प्रार्थना करतें ॥ कहं इन के सदृश भाव ॥ अत
 तो उलटो अपराध होय ॥ और वें ॥ हा के फल पूल प्रभू हाय सो परस करतें ॥ अंग
 के कातें ॥ सो न के होय तो में अज्ञा न हो ॥ नरे मन में उत्कृष्ट होय ॥ जो भक्त
 स्व को परस भयो ॥ अत भयो अंगीकार होय ॥ अब मोसमान को न हो ॥ यह कि
 र वंदन अंतराय होय ॥ और चें ॥ ब्रज न की प्राप्ति दुर्लभ होय ॥ तो तं गुल्म
 रत्नादिक अर्थ धो मो को रूपा का के देउ ॥ तव मो को सिद्ध होय ॥ यह अत्यंत दुर्लभ
 हो ॥ जो चरागा रज को संबंध होय के तत्काल कष्ट निवृत्ति में प्राप्त होय ॥ या प्रकार की
 के ऊपर वादी को अस्मा को ॥ जो प्रथम ३ श्लोक को की है ॥ ब्रज भक्तन को निवे
 करे ॥ तंतु यह आधुनी को निरोध को न प्रकार सिद्ध होय ॥ सो कहत हैं ॥ जो परम भा
 व होय ॥ ज न की बुद्धि जाय ॥ से ब्रज भक्तन को निरोध में लीन भयो ॥ नाम ब्रज भ
 क्तन के निरोध को साधन में तत्पर हो ॥ मुष्टि मार्ग में तन की प्राप्ति अर्थ के स
 निरोध को प्रकार इन में जान नो ॥ कोरते जो श्री ठाकुर जी ने ॥ पुष्टि मार्ग जो जीव
 सो तन को ब्रज भक्तन के भाव ॥ और उन को निरोध वना ॥ पुष्टि मार्ग के फल
 हो पावे ॥ ता के लीपें श्री आचार्य जी को प्रागट्य करायें ॥ तहां श्री ठाकुर जी अपा
 प्रगट भये ॥ ता पांछे श्री आचार्य जी को कुलतिन को विस्तार कोय ॥ जो उन वंश भ
 कुल के धा श्री ठाकुर जी सर्व गौरी वराजें ॥ तहां ब्रज भक्त श्री आचार्य जी को कुल श्री
 श्री गोवर्द्धन नाथ जी ॥ उनके सय श्री ठाकुर जी ॥ और ब्रज भक्तन को भाव रूप जी
 सर्व सर्व प्रकार से सब ॥ अधुना क जीव न के लीपें प्रागट्य कीये ॥ कोरते ॥ इन ब्रज
 भक्तन को स्वरूप श्री ठाकुर जी को स्वरूप साक्षात् ॥ लोक करत के जीव तन के अ

भव में आवें नाहों ॥ तहां के लीपें अपरा सव लीला अष्टि को सावित्री सहेत श्री
 आचार्य जी पद्यो ॥ तो ऊपर भुवलो के मे वंश होवे ॥ या प्रकार प्रगट भये ॥ तो
 यह जो पुष्टि मार्ग में ॥ जो श्री आचार्य जी द्वारा जीव को ब्रज संबंध भयो ॥ तन को
 यह विचार करतें ॥ जो ह्म सब लीला सांगी हैं ॥ तन श्री आचार्य जी की कीर्ति
 ही वें ॥ इतों का वंश लीला स्मृति को ॥ भावना के कैल ॥ पहले तो सब सेवा को प्रका
 र जानो ॥ ता पांछे नुजावित जाय था सीत को ॥ तव श्री ठाकुर जी में विनयगत होय
 ता को के बुद्धि निमित्त होय ॥ ह्म में प्रकास होय ॥ तव श्री ठाकुर जी के गुणगान को
 ता को के मन को मेल दू होय ॥ कोरते ॥ गुणगान विना परमात्मा जो श्री ठाकुर जी को
 गुणगान को ॥ श्री ठाकुर जी सो प्रसन्न होय ॥ तव नुजावित जाय का के तवा तो
 कोय ॥ तंतु श्री ठाकुर जी को लीला को गुणगान तो कोय ॥ तहां नाश्मन लौकिक में
 जाय ॥ और गुणगान श्री ठाकुर जी को बहुत होय ॥ प्रपन्नो जो अपरी सुन के स
 तुष्ट होत है ॥ या भाव सोरतें ॥ तो अंग भाव उत्पन्न होय ॥ तव पांको विरह उपेज विरह
 कर के संग कर के संगोत्पन्न क संगरा सुख होय ॥ तो भाव को न प्रकार उत्पन्न होय
 के सें सेवा गुणगान को ॥ तो अंग कहत हैं ॥ या प्रकार ४ श्लोक को करीन भयो ॥ अब
 और कहत हैं ॥ श्लोक ॥ मरता हूँ स्या यद्धत के तेनं मुरवदं सदा ॥ तथालौकिका ना
 तुस्मिन्ध भोज नरुसवता ॥ ॥ या को अर्थ ॥ अथवा सिद्ध करतें ॥ जो नुभ स्या ॥ तो
 श्री ठाकुर जी श्री आचार्य जी के प्रगट कोय ॥ तहां श्री ॥ तहां श्री गोवर्द्धन नाथ जी प्र
 गट भये ॥ और लीला सांगी होय ॥ प्रगट भये ॥ सोय जीवत नुजा सेवा को ॥ ता सो आ
 ला सुद्ध होय ॥ और गुणगान सो मन को मेल दू होय ॥ ता पांछे भाव उत्पन्न होय
 सोय आधुना क जीव को तं जान न होय ॥ श्री ठाकुर जी को सेवा को प्रकाश जानत
 न हो ॥ और गुणगान को न प्रकार को ॥ जगत में अने प्रकार सो कल्प ना का के गान
 करत हैं ॥ तो स्मिन्ध भोज नरुसवता ॥ गाय वे को अर्थ ॥ मन सो विचार कर के
 गावे ॥ तो बुद्धि का ह्म को कहें ॥ सोय श्री ठाकुर जी को भाव ॥ और निरोध को
 सिद्ध होय ॥ या प्रकार करि करतें ॥ कोरते ॥ जो वंश श्री आचार्य जी के पुष्टि मार्ग
 में अंगीकृत भयो ॥ निवेदन भयो ॥ तो या भाव सो सेवा और गान को ॥ तो कहतें ॥
 जा बाल क ह्म ब्रह्मा ॥ संबंध भयो होय ॥ प्रपन्नो सो रनें मुख्य श्री स्वामिने जी
 को स्वरूप जान नो ॥ और उन के सय श्री ठाकुर जी जहां बल संबंध को पा होय

॥ निरो ॥ सोई साक्षात् श्री गुरु प्रीति उद्योतन ॥ और भगवद्दे तउन को अंगी सतत ॥ सोई अंत
 ॥ २७ ॥ दासो जनते ॥ तोरे से भगवद्दे सो भाव सो मिले ॥ और अपने गुरु के पदो नो बलु
 गवत्संबंधो स्खे ॥ सो सब लोला संबंधो जाने ॥ ऐसे जे भगवद्दे सरवा अंतरंग
 पदे ॥ सोई गुनगान करे ॥ और उ नही सो सीरवने ॥ सो कह्यो चित भगवद्दे को को
 न और अन्य मार्ग सो मोखो जाय ॥ तो वाके बास सर्व ध्यान सो रवेना ॥ न गावने का
 हेते गंगाजल तो सुद्धे ॥ परंतु कोइ हो न जात के पात्र मे होइ ॥ तो कामन अवे जै सो
 गजल को पात्र होय ॥ तो मे गंगाजल न हो लेय ॥ तो मे रुक पूं दमदरा को पर जाय
 तो सब पहा लो जाय ॥ सो जे से पात्र मे जे सो जले ॥ ते सो सुध उज्जल दे वो
 जै सो संबंधो ॥ ते सो रंग होय ॥ परंतु उजल ता गे ॥ तो ते सो विचार अपने मन मे
 उरुत बा भगवद्दे होय ॥ ते न की आजा प्रमान जान नो ॥ तो भगवद्दे तारा प्रसन्न हो
 तारा प्रथम भगवद्दे की कृपा द्विष्ट होय ॥ एको कृपा विना जतन न हो होय ॥ परति
 अं जानने ॥ सो जव गुन गान करे ॥ तो दुन या को अनन्य जा मे ॥ श्री स्वामि नो
 सो ठाकुर जो सतु छे होय ॥ एको कृपा विना जतन न हो होय ॥ या प्रकार अधुने
 क जीव को उष्टि मार्ग सिद्ध होय ॥ भाव अधिक अधि क दूइत जाय ॥ अन्ये तरूपा
 को पर मुख्य फले ॥ कोहे ॥ पर अनन्यता आवने ॥ पर दृढ भाव राखने को हे
 मुख्य उपाय तो उष्टि मार्ग भक्तन को यो हो ॥ और नही ॥ कोहे जे भगवद्दे को
 वानी हो ॥ तो तो भगवा न हो की वानी हो ॥ कोहे जितने गुण भगवान मे ॥ भगवान
 बट गुन पूर्ण हो ॥ भगवान सर्व सामर्थ्य मुक्त हो ॥ कोहे ॥ भगवद्दे जो साक्षात् प्रभु की
 लीला देखत हो ॥ ते सो भगवद्दे लीला भगवद्दे गावत हो ॥ सो प्रभु को अनुसा की
 लीला गावत हो ॥ जे सो प्रभु जा समे लीला करत हो ॥ सो श्री ठाकुर जो के अनुसार
 अधि प्राप्त सहित करत हो ॥ अपने मुख नही चहते हो ॥ तो श्री आचार्य जो सुवोधी
 जो मे रहे ॥ जो भगवाने हो सो उपाद सहित स्नेह करत हो ॥ और ब्रज भक्तन को
 निरुपाधिक स्नेह दे कोहे ॥ भक्त जो श्री ठाकुर जो सारंग की इच्छा करत हो ॥ सो
 केवल श्री ठाकुर जो के मुख देनाथ ॥ अपने अथ नही ॥ तो भक्त हो अपने मुख गीत
 तो इन को भक्त न कहिये ॥ ते मे ज बकुष जाये श्री ठाकुर जो पद्यो ॥ नव से ससा
 त भगवान को पाइ ॥ तुष्ट अपने मुख भाग्यो ॥ तो न सुकरे वजो न दुभी व करे ॥
 उपाधिक स्नेह हो ॥ सब श्री ठाकुर जो को मुख देनाथ करत हो ॥ सो प्रथम मूल वि

चार जो ॥ तो श्री ठाकुर जो के प्रथम दर्शा भई ॥ जो रम न कीये ॥ तो रम न सपि प्रो प्रा
 होइ तो रम रा होय ॥ प्रान रम न तो स्विदा सर्व काल विषे हो ॥ यह श्री ठाकुर जो के इच्छा
 होत हो ॥ सब ब्रज भक्तन के प्राग रूप भयो ॥ तो ला सापि प्रो सब प्राट भई ॥ तो ब्रज सब
 धी लीला रमना तो ब्रज भक्तन को हो ॥ सो सब श्री ठाकुर जो के लोपे ॥ तो ब्रज भक्तन
 को श्री ठाकुर जो ॥ ओ विषे निरुपाधिक स्नेह दे ॥ ते सो यद्वा श्री आचार्य जो के उष्टि मार्ग
 मे सेवा हो ॥ तो केवल श्री ठाकुर जो के मुख देनाथ हो ॥ तो हो भक्ति इन के सेवक अंत
 रंग भक्तन हो ॥ सो श्री ठाकुर जो के अधि प्राप्त ॥ मेरी ना से मे जो लीला ॥ तो के अंत
 सा के रतिन गावत हो ॥ कोहे ॥ अपने भगवद्दे ॥ ति नही को अनुभव जाता वत हो
 ति नही की कृत्य जोग ॥ श्री ठाकुर जो और भगवद्दे या प्रकार सम्य जोगान कर
 वाय प्रकार गाव नो ॥ तो भगवद्दे कृत जो श्री ठाकुर जो ॥ नि न को जान को हो ॥ जे मे
 उरु सामि प्रो अन्य त धर्मि श्री सहित उज्जल ॥ परम स्वयं सहित ॥ तो श्री ठाकुर
 को अंगे गावत वरुत स्वा होय ॥ पाछे जो महा प्रसाद लेय ॥ तो कृतार्थ होय ॥ ते से भ
 गवद्दे कृत वानी सुने के श्री ठाकुर जो हो संतु छे होय ॥ और जीव कल्याण कर के आ
 ने जो ॥ ते गुनगान करत हो ॥ ते जे से स्वयं भोजन समान ॥ तो वा को प्रभु मुख मे
 दन करत हो ॥ अंगो का नही करत ॥ तो महा प्रसाद न होय ॥ प्रसाद तो भई ॥ ज्यप नो
 उर कोइ जे से भई ॥ तो अधरा भक्त प्रभु को नही ॥ सो कल्पत बानी ॥ सो कक्षा
 पादिक ॥ ना होय ॥ कक्ष अलौकि की सिद्ध होय ॥ परंतु कृतार्थ न होय ॥ ता को उष्टि मा
 र्ग को फल न होय ॥ तो गुनगान न करे ॥ या प्रकार ॥ स्नोक को अर्थ भयो ॥ अब और
 कहत हो ॥ स्नोक ॥ गुरागने सुसा वक्षिगी विदस्य प्रनापते ॥ पथ तथा गुणो
 नां नैवात्मक निवृत्तो न्यतः ॥ ६ ॥ या को अर्थ ॥ अब वारी से देह काले जो तुम भ
 गवद्दे कृत गुण गान हो ॥ नाई कर के भगवद् प्राप्त धनार्थ ॥ और गुनगान ते निराध
 र सिद्ध न तोये ॥ और वेद पुराण मे अने कथ भि करे ॥ और फल इ करे ॥ और
 मुख्य ज्ञान करे ॥ जामे सर्व बस्तु को वस्तु रूप जाने ॥ जो न भेद न हो ॥ नाई कर
 के मुक्ति होत हो ॥ और तुम तो करे भगवद्दे की वानी गुणगान करे ॥ कल्पित वानी
 को गुनगान न करे ॥ यह भेदा भेद बताये ॥ ना के मुक्ति के से होय गो ॥ और श्री
 ठाकुर जो के को पे सव पदाथ हो ॥ तो सब भगवद्पदाथ हो ॥ भगवद्पदाथ ॥ ऐसे सब
 वेद पुराण मे करे करे ॥ तो सब वेदों त सो ज्ञान छोड के ॥ पर जो व गुनगान करे

॥ निर ॥ सोताकरके श्रीठाकुरजीको प्राप्त होयगे ॥ यह ते हेर कोरि को तारो कहते हैं ॥ जो प
 ॥ १८० ॥ ज्ञान तो साध करे ॥ योमं स्वामी सेवक को नातो हो सव ना सरोत हो ॥ कोरते सख
 स्वल वन जंगम सब ब्रल करे ॥ और अरु को ब्रल करे ॥ तब तो भक्ति मार्ग में गये
 कोरते यह आदि भैतिक में वैराग्य स्वरूप ॥ और पूरा पुखी तम में नार न न्यत
 तो कहते हैं एक तो आदि भैतिक ॥ एक आदि विवक ॥ एक अध्यात्मिक ॥ सो को न म
 सो कहते हैं ॥ आदि विवक सो तो साक्षात् पूर्ण पुखी तम ॥ सो भक्ति मार्ग में सेव्य
 और अध्यात्मिक जो अक्षर रूप ॥ जो ज्ञान उपासन करते हैं ॥ सो ज्ञानी के सेव्य
 और आदि भैतिक वैराग्य स्वरूप जो सब दुख सगान रहे ॥ सो सब लोकि ससो
 सेव्ये ॥ तो ते जो सर्व ब्रल ऐसे भावना करत हैं ॥ सो तो अक्षर में लीन होत
 उन को पूर्ण पुखी तम की प्राप्ति भई ॥ भक्ति रस की प्राप्ति को अनुभव नहीं होत
 न हो स्वामी दास को संबंध नाहीं ॥ तो ते भक्ति मार्ग को विरोधी जानें ॥ और
 में कर्म करे हैं ताकर के वेद लो क की प्राप्ति होत है ॥ और जो कोरि निष्ठा वेद में क
 में को ॥ तो पछे वर कर्म को फल श्रीठाकुरजी को अपने करे देय ॥ पाछे भक्ति
 में रुचि राखें ॥ तब कोरि काल में जब पुष्टि मार्ग में अनन्य करे ॥ ता को भग
 वद संबंध प्राप्त न करे ॥ तो ते या प्रकार जो कि क अलौकिक मपी दा को ज्ञान से
 जो श्रीठाकुरजी पुष्टि रस सो विराज न हो ॥ सो तो साक्षात् पूर्ण पुखी तम है ॥ और
 अक्षर सब दोर व्यापक है ॥ जो जा को ब्रल कहते हैं ॥ और पर वैराग्य स्वरूप है
 सो पर तब ब्रलो उहें ॥ तो में पर जाने ॥ जो पर भगवद सता ते है ॥ तो त कार को
 उर वन ही है ॥ जो व मात्र पर दयारे ॥ और से वा पूर्ण पुखी तम को कर ॥ तो त
 वै ब्रलो उ सम तुष्ट होय ॥ मूल तो श्रीठाकुरजी को ज्ञान तो ॥ और मन पूर्ण पुखी
 तम में राखे ॥ और भगवद हो ॥ सो श्रीठाकुरजी के निकट वानी करे ॥ तो न
 कृत्य जो गुने ॥ और मन में अत्यंत सुख पावे ॥ अने इसों करे ॥ कैसे गुण
 नवें ॥ जहां त शिरो धसि धरोय ॥ जहां त शि मन ल गाय के करे ॥ और ज वी
 रो धसि धरोय ॥ तब आप ही गुन गान करे ॥ तब वा को मन कह न हो जाय ॥
 सवोत्मक भाव सिध होय ॥ कोरते भगवदो वानो कृत जो ॥ गुन गान श्री
 ठाकुरजी को ब्रत होय ॥ कोरते गोविंद जो ॥ गोना मत था श्रीगोकुल के व
 ज भक्त तिन को रं से से जो गे बिंदे ॥ तिन को ब्रज भक्तन की लीला सख

जोगन गाने ॥ सो अत्यंत प्रीति ॥ कोरते ब्रज भक्त श्री ठाकुर जी की आत्मा ॥
 तो ते पर करे ॥ गुन गान सुखा बधि गोविंद स्य प्रजापति ॥ तो न पुष्टि मार्ग विगवरी विना
 जो अत्यंत गुन गान करते हैं ॥ सो अत्यंत मध्य भाषणा करते हैं ॥ और आत्मा ज्ञान
 न हो कोरि ॥ जो पर नुम अपने मन होत कहत हो ॥ जो गुन गान अछे ॥ और तो वर
 त भगवदो आत्मा ज्ञान होने कृतार्थ भये ॥ न हो कहत हो ॥ जो श्रीगुरुदेव जी सी के
 ब्रलानंद में मग्न रहे ॥ प्रथम आत्मा ज्ञान सिद्ध भयो ॥ सो व्याख्या स जो वक्ष्य में प्रथम
 कर उतर दीयो ॥ सो श्रीगुरुदेव जी ने श्री भगवत ॥ श्रीठाकुर जी की लीला को मुन तो
 उर ब्रलानंद को सुख नुचन गये ॥ सो छोटि व्यास जी पास आर के ॥ श्री भगवत सुने
 तब भगवदो लारस में मग्न भये ॥ तो ते आत्म ज्ञान ते गुन गान अधि कहत ॥ तो ते
 आत्म ज्ञान नष्ट गयो ॥ जो ज्ञान को साधन करत हैं ॥ जो अत्यंत दुर्लभ हो ॥ सो अक्षर
 योमं कहा कह जो ॥ सो जो सुख को लीन गोपे ते होत है ॥ सुख देव जी को ज्ञान में सो सुख
 स्व प्राप्ति में न हो ॥ तो कोरि कोरि ज्ञान को वेद के कर्म कोरि करे ॥ पर भगवद गुन
 गान समान और सुख ना हो ॥ या प्रकार इसो क को अधि भयो ॥ प्रव और कहत है ॥
 सो ॥ हिंसा नाना न ज्ञान न दृष्टा रूपा युक्तो यद्य भवेत् ॥ तदपि सर्व सदानंदं दृष्ट
 स्थं निर्गुणं वीर ॥ ॥ या को अधि ॥ अब वा शो की आस का होय ॥ सो छोट के मो लोप
 करत हैं ॥ से श्रीठाकुर जी ज्ञान रूप पुकते होत हैं ॥ वे आधुनी जी व के हरे में पधाते हैं
 तब भगवदो होत हैं ॥ सो भगवान कैसे हैं ॥ सो श्रीठाकुर जी तो नो काल विषे आनंद
 स्वरूप हैं ॥ तब सामर्थ्य युक्त हैं ॥ सो अब दृष्ट में पधार ॥ तब सब दुख दूर होत हैं ॥
 ता को हृष्ट कहत हैं ॥ जहां तो इ जो व निज पुखी मानत हैं ॥ नहां तार श्रीठाकुर
 जी हरे में न हो ॥ अक्षर सो कहत हैं ॥ सो श्री भगवद गोता में गजे के मोक्ष प्रसंग में
 जो फजरा जता में दस दजार हस्तो को वलहत ॥ त्प को घाते न पकरो ॥ जब गज दासो
 परंतु छोड़ो न हो ॥ और या के साथ जो गज तिन ने कृत जतन को ॥ तब सुभायुक्त
 हो चले गये ॥ तब गज को अभिमान गयो ॥ सब ते निरास हो ॥ श्रीठाकुर जी को
 स्मरण को ॥ जो अक्षर में को उना हो ॥ या प्रकार अनन्य हो के श्रीठाकुर जी की प्रार्थना
 की लो ॥ सो श्रीठाकुर जी तत्काल गुरु सवार हो ॥ वे कुंठे पधार ॥ जब गज को अति
 हेर व वरुत पाइ न पधो ॥ सो मोक्ष करत भये ना मयार ते कुंठे ॥ भगवान से सहाते हैं
 और गजे दू तो अपने छोटे के लोपें स्मरण कीयो ॥ और पुष्टि मार्ग भगवदो तो श्री

निरो॥ ठाकुरजी के मिले वेंकों दुख करत हैं॥ तहां तो कखू लौकिक काम नहीतें॥ ताते उहां लख
 २६५॥ ल गुन गावत हैं॥ तब हंस सीं बाकुर जी दुख करत हैं॥ अपने जन को हंस सीं बाकुर जी
 नखे देख सकत॥ तहां कोई सदेह करे॥ जो हंस ससार में अपने की जीव पावत हैं और
 वैष्णव कह पावत हैं॥ पर सीं बाकुर जी का कह दय में नहां आवत॥ या प्रकार कोरि को
 तहां करत हैं॥ जो ससार लौकिक संबंध कर दुख पावत हैं॥ पर सीं बाकुर जी को निमित्त
 दुख नाही होत है॥ कोरि को स्त्री पुत्रादिक कर कोरि को बच न आभि मा न कर दुख पा
 त है॥ या प्रकार ससार को दुख होत है॥ और वैष्णव को संगादिक दुख होत है॥ कोरि को
 उद्धार निमित्त दुख होत है॥ पर तु जो दुख करत है सो अपने अर्थ कर नै॥ तो प सीं बाकु
 र जी प्रसन्न नहीं होत॥ अपने वा वैष्णव को दुख डर करत हैं॥ ताते ने उष्ट्र मार्ग को प
 ल नही होत कोरने॥ सीं बाकुर जी को अभय॥ और या जीव को दुख डर भया॥ सो
 यह पुष्ट मार्ग कोरत नाहीं॥ सो उष्ट्र मार्ग को करी गते हैं॥ जो आप दुख पावें को और
 का जो को सुख दै हैं॥ जो यह विचार॥ जो आचार्य जी कृत पुष्ट मार्ग में भोग आंगी
 कार भयो॥ परंतु उष्ट्र मार्ग को रीत सो सेवा न हो वनी॥ ताते गुन गान कर सेवा धिया
 विचार कर जो सहजे में येन॥ आप सुहृता सो प्राप्त होइ॥ सो सीं बाकुर जी को कर्तन
 भाव सिद्ध आबि॥ सो आचार्य जी मता प्रभु आप कहें हैं॥ जो सीं बाकुर जी तो तब
 आगे॥ जब आचार्य पाना नाना लसी कष्ट होव सुहृद॥ जो नाना प्रकार को सामग्री तें
 और सुध नहीं तो आंगी कार न करे॥ और जो मुष्टि चना सापच सुधे॥ तो प्रसन्न ना
 ते और तें और बिना भोग धरे तो मान सी करे॥ तो सिध नहीं होइ॥ सीं बाकुर जी को
 अमविचार भोग धरे॥ और अन्य तद्धस्त सो गुन गान करे॥ सो सीं बाकुर जी अपने
 जन को हंस देव के॥ कृपा कर के वा भगव हो कहें मे पधारे॥ सो के से तें॥ भगवान
 साक्षात परमानंद रूप हैं॥ सो से सीं बाकुर जी हरे में आप सब हंस पाद करत हैं
 सो प्रकार आंगे कत तें **सो कहें**॥ सबीन हंय त्याप कृपा न हं सु सुलभ॥ हं हं स्व
 रान सुखी॥ शरीर प्राप ते जनान॥ **याको अर्थ**॥ अथवा धी को आस करे॥ जो भ
 ने लौकिक केलीयें प्रार्थना करें॥ तथो वैदिक मोदिक केलीयें प्रार्थना करें॥ साया
 ध करे॥ पर जो सीं बाकुर जी के मिले वें केलीयें॥ अनुभव केलीयें प्रार्थना हंस करे
 प्रभु की मिले वेंकों आगे वरे वरे भगव होन साधन को पैं॥ और स्हा तुम कहें॥ जो
 अपने उद्धारार्थ॥ प्रभु के मिले वें के अर्थ प्रार्थना करें॥ सीं बाकुर जी तब के आने दहाने

कष्ट के दहाने नही॥ सो वैष्णव को अपने आने दहाने होयें॥ तब हरे दहाने॥ ताते तु
 ज्यो पुष्ट मार्ग में अधिक सुख करा हो॥ पर सदेह के तहां कहत हैं॥ जो सीं बाकुर
 जी तो सदा सबीन दहें॥ सो आगे भगवान मे अपने उद्धारार्थ सीं बाकुर जी को भजन
 कोये॥ पर सीं बाकुर जी के सुखार्थ नहां कोये॥ तो ने सीं बाकुर जी सब के वरे वरे भजन
 तें॥ सो मयी हा मार्ग न को भजन साधन करत देव॥ ससार हाय तो भिदोय मुक्ति
 दिये तथा मयी हा मार्ग में से भक्त हैं॥ जो मुक्ति को न लोये॥ निन को भक्ति ही ना
 हं में पुष्ट मार्ग भीत नहीये॥ कोरि को सापुज्य॥ कोरि को आपुस सामर्थ्य हीये पंतु
 व्यापि बे कुंठ को प्राप्ति नहीं॥ ब्रज में जोगी जो जन में भक्ति करीतें॥ सो सब ते उत मोत प्र
 उष्ट्र भक्ति॥ जो सीं बाकुर जी को सुख देवें को॥ अपने निहा वेद पुरान लौकिक में भरे
 परंतु सीं बाकुर जी के सुखार्थ ही कार्य करें॥ तब सीं बाकुर जी तो सबीन हं रूप हैं॥ तें सो कृ
 पानंद और उले भरे सो होत भये॥ तब कृपा नंद होइ के कता कोये॥ उन ब्रज भक्त के वा
 में विराज में उगा को गान सुनत भये॥ सो भक्त न को गान सुन पूरी प्रेम कर जे से नव
 नीत अर्थो के संप्रधने इवी भूत होइ॥ तें से ही सीं बाकुर जी अत्यंत प्रेम भाइवी भूत
 होये॥ ब्रज भक्त को शरीर न होये॥ रसा नु भव कारये॥ तो यह सीं बाकुर जी को न हा प्रभु
 कर प्रगट भये॥ जो पुष्ट मार्ग उन रोज भक्त के नाव को सेवा हैं॥ बा में निज सुख
 मान सेवा करें॥ ता को फल होइ॥ सो जव वैष्णव उष्ट्र मार्ग में प्रवर्त भवो॥ तब वरे प्रेम
 सो सीं बाकुर जी के लो ला गुन गान कर कहत हैं॥ तब सीं बाकुर जी कृपा नंद होत हैं
 सो के से होत हैं॥ सो कहत हैं॥ जो हृदय में तो सीं बाकुर जी बैठे हैं॥ सो उष्ट्र मार्ग भगव
 दान के वात्सल्य ते सेवा गुन गान को आनंद सुन के॥ पूरी प्रेम के वस होय॥ जें से ब्रज
 भक्त के जस प्रसन्न होत हैं॥ इवी भूत होइ अपने रस को अनुभव करावत हैं॥ तो या पु
 ष्ट मार्ग के सम को उर्को मागे नही है॥ और ये फल कां प्रप्ति नहीं॥ या प्रकार द सो क
 को अर्थ भयो॥ आगे ओम् कहत हैं॥ **सो कहें**॥ तस्मात्सर्व प्रेत्य जप निरुद्ध सर्वदुःखा
 सदानंद पर जे पा साचे दानं दता सुता॥ **याको अर्थ**॥ अथवा कोरि सदेह के
 जो सीं बाकुर जी भक्त को गुन गान सुन के कृपा नंद को होत हैं॥ कष्ट ज्ञान को साधन
 नहीं हैं॥ सो अकेले गुन गान में कता छुखत॥ या प्रकार कोरि को तहां कहत हैं॥ जो वैष्ण
 व को परेत्याग कर के निरोध सहीत सर्वदा सब कार्य विषे॥ सभ से मे कुं गुन गान का
 तें॥ सब को गीत्याग करे॥ कदा अलौकिक वैदिक को छोड़ो नो नही॥ वै लौकिक वै

॥ निरोध ॥ दिन को भगवत्संवध धर्म बिना जाने न छोड़ें। तो वह भूट हो जाय। तो कौन प्रकाश
॥ १२३ ॥ सो उपाय छोड़ें। प्रथमो श्री आचार्य जी द्वारा नया उन कल्प द्वारा वस्त्र से वध कर
 तो तोम लौकिक वैदिक देह संवोध पदार्थ प्रारा देह इहे आदि आधा कुर जो को स
 पना करे। नामे अपनी सतान राखें। प्रथम तो ऐसे न्याग के। पाग मुख्य है। जो सव
 दार्शन भगवान के दे। से भगवान के देय पाछे करा कर सो कहत है। उरा गान को
 सम प सम को लोला को। मे गला अंगार सेन पयित सम सम को गान करे। अपने
 र मे जो लोला को सम के। तथा मान गि कवन लीला को भावना कर गुण गान करे। न
 व निरोध हू होय। तब वसन उत्पन होय। पाछे यर अवस्था होय जो सदा नंद रूप भग
 वान के आनंद मे मग्न होय गुन गान करे। तब वा जीव को लौकिक वैदिक का हू को
 नि नरे। काहेत लौकिक सक्ति छट के भगवत् सक्ति भरी। तब लौकिक ने छे
 तोम होय न होत। सोन वसव प्रकाश भगवान मे आसक्त भयो। तब सब प्रकार
 श्री ठाकुर जी वा कोर साकल्य है। यह वेद मे करे है। जो अपने वेद को धर्म छोड़े। ता
 को बड़े दोष है। सो दो सते भक्ति सिध न होय। न होय श्री आचार्य जी कलत है। अपने
 से स्वत को जो उपन भगवद पर होय। लौकिक वैदिक सब छोड़ भगवद सेवा गुन
 ने मन को प्रवसक यह करे। सो लौकिक वैदिक तुम सो नवने गो। सो निरोध लोप
 लौकिक वैदिक करत है। तो तुम को वात को चिंता मत करे। या प्रकार प्रिमा
 वैष्णव को सेवा गुन गान सर्व काल विषय करे। तो निरोध होय। सो के संशय
 करे। जो प्रेम सहित स्निग्ध धन को न मना होतान वंधान ब होत है। श्री सदा
 द भगवत् तिन में निरोध है। नामे लौकिक प्रीति के लोप कष्ट फल न होत है। तो
 निरोध सिद्ध न होय। नाने सदा नंद जो तोम तत्पर होय। तान वंधान न होय तो भ
 गवद वापन होय। उन गान को तो सदा नंद जो भगवान यर उरा सपरी तिन
 समान होय जाय। जे से सदा नंद भगवान है। जिन मे सब काल विषय आनंद रहत है
 ते से ही पा जीव को सब काल विषय आनंद है। संसार को कष्ट सुख डख न व्योम स
 वे काल भगवा दो वसे मे मन रहे। या निरोध को फल इसा है। नाने सदा नंद पा होय
 के गुन गान करे। पर निरोध को प्रकार है। या प्रकार नव शोक को अधि भयो। अधि
 र कहत है। **॥ साकल्य ॥** अह निरोध रोषन निरोध पंगत। विरुद्धाना मुग धिपिनि
 रुद्ध वरायामिने। **॥ १४ ॥** या को अधि। अधि हो दो दो रूष पस करे। जो तुम जीव के लोप

प्रथम श्री ठाकुर जी मे निरोध सिद्ध होय वज भक्तन को तकी प्रार्थना करे। सो पा मे पहजा
 निये जो तुम को निरोध ना हो। निरोध के सो सिद्ध होय गो। काहेत वज भक्तन को नवने
 रोध भयो। ते से हो भगवान सद्रस नामे गुन गान करे। तिन को निरोध सिध होय तो
 तो निरोध सिद्ध भयो होय तो तुमारे हू को दे। उमा दो सदा प्रकाश चले तो निरोध
 सिध होय। या प्रकार कोर संदेह करत रा कहत है। जो हमे तो निरोध होय चुकोर
 सो को न प्रकार निरोध सिध कीयो। सो वज भक्त श्री ठाकुर जी समान न होय। श्री नि
 रोध करन लो। ते से हो हमारे निरोध सिध भयो है। मे निरोध को पद दो को पा
 चुको। सो जे से भगवान भक्तन को निरोध करे को साम धे है। ते से हो साम धर मू
 ताते जा प्रकार वज भक्तन को श्री ठाकुर जी अंगी करे करे। ततो प्रकार श्री ठाकुर जी
 हमारे अंगी करे। ताते हम निरोध को प्रकार अपने भक्त नो विषय बान न कहत है
 सो जोर मोर मत है। हमारे आजा प्रमान चले गो। तिन को निरोध सिद्ध होय गो
 ताते हम तो निरोध को पद दो पा चुके है। अधि अधि नो कजो जीव है। सो लाया क
 अधि कार का अपने स्वरूप को भूत न मे है। सो उन को तो श्री ठाकुर जी के विषय
 को ते परे। श्री उन को अधि लौकिक सुख को अनुभव हो। ताते वे लौकिक सुख इव
 अनुभव करत है। ताते ना जीव पे श्री ठाकुर जी को हारा है। सो जीव नो निरोध
 के साधन मे प्रवत होय गो। श्री जा जीव को अंगी करन कारो। श्री ठाकुर जी को
 सो जीव निरोध के साधन मे न हो प्रवत होत। ताते जो जीव श्री ठाकुर जी के ह
 पा पा चत। निन के लोप मे निरोध को प्रकार करत है। श्री उन को के मन मे वदु
 तने होय गो। श्री जो अधि उर जव है। तिन को श्री ठाकुर जी अंगी करे न हो
 निन को तो निरोध को प्रकार। काहेत कार के संगत मुने। परत उन के मन को
 तो भावे न हो। काहेत न ता वगे। उन को तो श्री ठाकुर जी ने लौकिक सक्ति लगाय
 सो उन को अधि विद्या का के लौकिक सक्ति मे वदुत हो मन जागे गो। अधि निरोध अधि
 कार विना सिध न होय गो। वज मे श्री ठाकुर जी प्रगट भये। सो सब जीव न के नि
 रोध सिद्ध होय श्री उवाध नी जी मे वरा न हो। जो दस स्कंध संगे निरोध को है।
 सो वज मे वज न करत है। राक्षस हरत है। सो वज भक्त न सब को निरोध सिध होय
 उन को स्नेह वदुत वदुत करे। उन को भगवान अंगी कर विचार कीयो। सो वज मे
 रास सारल। तिन के उर के विषय तो भगवान से दस वयो। काहेत। उन के भक्ति भो मे

गिने ॥ अंगीकारनहींकरोत। तैसे ३० पुष्टि मार्ग में जीवको अंगीकारकरोत। सो
 ॥ १८ ॥ यहीनारायणको प्रकाश मय फल जानना। सो तिनके मन में निरोध होय। उनको
 किकासति सिद्ध होय। अर्चन रूपन करे। ऐसे १० स्तोत्रको अर्थ भयो। अब कहते
 सो **स्वा** हमारा ये विनिमुक्ता स्तमगना भवसागे। ऐतिरुद्धास्त एवाय नोदमाया तपस्वि
 अवकहतें। जो जीव श्री गुरुजी अंगीकारको विचार नारीकीये। बूढ़के पर पुष्टि
 मार्ग आइये। और अनन्यता दृढ़ होय निरोध प्राप्त भये। अपने स्वरूपको श्री ठाकुर
 जीको स्वरूप जाने। आसुरजी बहते तिनतो ये पुष्टि मार्ग प्रगट हो। ताको महात्म्य
 स्वतः। परंतु उनको संगत नही। उनको हेसही कहते। विमल समुद्र में अज्ञानता
 विरह में रहते। तिनको श्री ठाकुरजी न्याय कीये। परत हार जानना उनको कष्ट
 हाप नही। जैसे देवीको भगवद्दत्त विना कष्ट न मुहाय। पाप्रकार है वो आसुरी में ता
 नम्य हो। ॥ १९ ॥ अब और कहते। **स्वा** ॥ गुरुस्वा विष्ट चिताना सर्वदा सुर बैरिगा।
 रविहरेण न स्थाना रवि वस्तु। ॥ **भाषा** को अर्थ। तहां वाहे सदैव को। जो जीवको अ
 नेक जन्म के प्रतिबंधते। और अनेक जन्म सो विषय वस्तु आयो। सो एक श्री ठा
 कुरजीके गुणगाने निरोध होयेगा। साधन करके पापता छिन भयो नही। सो पाप
 प्रतिबंध को तोरेगा। तब पाको कैते भगवद् प्राप्त होयगा। और अनेक जीव गुण
 वतें। तिनको भगवद् प्राप्त होत नही। पाप्रकार कोई करते नही कहते। जो गुण
 सब जीव श्री गुरुजीके गम्यते। परंतु गुण में निविष्ट नही होते। गुण को हेतु कहिये
 श्री ठाकुरजीकी लीला में मन प्रवेश करके गावेनो। श्री ठाकुरजी प्रसन्न होय जैसे
 व श्री ठाकुरजी गोचारन को पथे। जयघर में श्री ठाकुरजीकी लीला ताको समर्पन
 कीयो। रावको ज ब्रज भक्तन को सयोग भयो। तब अंतरंग सराजो। सो रावको
 व अपने धर में लीला को अनुभव करके गुणगान कोये। तैसे ही पापुष्टि मार्ग में बैसा
 गुणगान को। और समेकी लीला को विचार। भाव सो गुणगान को। कहूँ को क
 न करे। ऐसे न करनो सब समेकी लीला के गुणगान को सो केसे। भगवान् मुरदै
 न्य के मारन वारे। सो इहां मुरै पुको करे। तहां कहते। जैसे नवका मुरै इहां सो स
 जार कन्या सो भाक्त तिनको प्रतिबंध हू। जो पाप सो मुरदै न्य होत। नवका मुरै सभान
 वल अदैन्य होत। सो सोता केटि को चोकी मुरदै न्य कोहती। सो जलात्मक काट म
 रदै न्य रहत। सो भक्तकी आतिरेय के श्री ठाकुरजी सत्यनामाको संग लेन का

मुरके ऊप चढ़े। सो भगवान् मुरदै न्य नरकासुरको पोत। सो सत जार भक्तन को घर
 लार अंगीकार कोये। तैसे ३० पुष्टि मार्ग जीव स्मरे। जव भगवान् की लीला
 में मन प्रवेश कर गुणगान कोये। तब जैसे मुरदै न्य को मार १६ रज्ज कन्या निज
 भक्तन को अंगीकार कोये। तैसे ३० पुष्टि मार्ग भक्त जोहें। सो ज ब्रजगान क
 रे। सो जैसे मुरदै न्य को मार १६ रज्ज कन्या को अंगीकार कोये। उनके सय प्रति
 बंध करे। तैसे ही पुष्टि मार्ग विस्मय अनेक पाप रूप प्रतिबंध। तिनको निरोध मि
 ट्ठ करे। सर्व अनेक अंगीकार करे। ताने भगवान् के तो अनेक नारी। मंतु प
 ते मुगै बैला। पाके लिपे करे। सो परजता रेवे को यात्र का। नाप लोरा देखता
 करे। भक्तन को ससार दुख कष्ट न दोरगे। पर पाप रूप प्रतिबंध ते तिनको श्री
 ठाकुरजी मुरदै न्य में प्रवेश करे। सब दूर करे। कोहने। अपने लोको जीव के दृष्ट
 में वीह सो मुन के परम आनंद पावतें। ताते वैस्मव को परो भाव को भगवद् वि
 निपेणार्थ भगवान् के प्रसन्नार्थ गान करते। उनके सुनने के गुणगान को
 साजव भगवान् पाप प्रसन्न होयें। तब पा जीव को कटाइ साहरी सो कहत
 हैं। जो नाप लोरा दुस्व सुख कष्ट वाधान करे। जैसे भगवान् राखने सय
 न्योरे तैसे पते। जीव हरि वत सुधी होय। और हीम से दूर रहती। तब जीव स
 व के दुख कोहने। नामे आप सुधी होय। नामे कला कहने। पर भगवद् गुणगान से
 सोह। जो निष्काम होय श्री ठाकुरजीकी लीला में मन लगाइ गुणगान को। तो
 से सुख पावे। हरि समान आनंद होय जाय। पाप्रकार १२ स्तोत्रको अर्थ भयो। अब
 और कहते। **स्वा** ॥ तदा भवेद्दया लुत्वा मन्मथा चूर तापना बाध संकापे
 नास्त्य हृद्यो सोपे सिध्यति ॥ २० ॥ **भाषा** को अर्थ। अववादे करे। जो पे जीव श्री
 ठाकुरजीकी लीला को गुणगान करे ते हरि हो जाय। जैसे हरि सुखी ते तहां प्रका
 जीव हो जाय। तो पर अपने समान या जीव को दैव के बहुत प्रसन्न होयें। तब
 रूपाष्टि और पाप चूर दृष्ट करत होयें। तहां कहते। पर प्रसिद्ध होसते
 जो कोरिये गारा जाहो। ना को हलक बह कोरि न करे। तब बरत जीव हुत प्रसन्न
 होर के गोमया को दै। नव वर वहुत वडि जाय। पाछे वहुत वहुत बारा जो की
 रूपाष्टि वाकी न रहे। मुरै छे। जो पर मेरो वी को पोरे। तब बरत जो किने
 नही। अपने सामर्थ्य बर जो। तैसे ३० पुष्टि मार्ग जीव भगवान् की लीला गस्त गाव

निने॥ भगवानसे रोने हैं ॥ न ब तो भगवान की वृत्त होत हो रोग ॥ तब भगवान सी को ज्ञान
 हो ॥ १८५ ॥ हो ॥ स्मरण को कर न हो रोग ॥ पा प्रकार जव विरोध भयो ॥ तब जीव की कला गति होत
 हो रोग ॥ तब कर न हो ॥ जो श्री ठाकुर जी परम दयाल हैं ॥ पर दया भाव तो लौकिक ज्ञान से
 और भगवान में यह धर्म न होत हैं ॥ कोलेन जब जीव भगवान की लीला को गुन गान कर
 रत करत भगवान सम होत है ॥ तब या जीव का भाव और तब दृष्ट हो रोग ॥ रंच बहन वे रोग
 व्यसन अवस्था हो जायगे ॥ कोलेन यह जीव को पह जो अभ्यास जो लौकिक ना स हो रोग
 भगवदासति भगवद विषय अभ्यास हो जायगे ॥ कोलेन ये सी आस कर भगवान वि
 वेंन कर नो ॥ भगवान तो अपने भक्त के ऊपर सदा प्रसन्न रहते हैं ॥ सो ब्रज भक्त ज्यो
 ज्यो भगवान को प्रसन्न होत देखते हैं ॥ न्यो न्यो विसेस भाव श्री ठाकुर जी में होत है ॥ नो
 ने भगवान को परम दयाल ज्ञान के स्मरण करने ॥ और देहा ध्यास को छोड़ के भगव
 दाध्यास हो ॥ ऐसी आसति सो सेवा करने ॥ पा प्रकार १३ स्नान को अधि भयो ॥
 अव और कहते हैं ॥ स्नान ॥ संसार विषय शृंग नुं श्रियान होत है ॥ स्नान सविनसु
 जो भूमि सत्य यो ॥ १८६ ॥ पा को अधि ॥ इंदो बहि मुव न होत ॥ पा प्रकार अपने और नि
 ज इंदो न को दुख भाव छुड़ाया ॥ श्री कृष्ण में लोव ॥ सब वस्तु में श्री ठाकुर जी को न भूल
 जानो ॥ श्री कृष्ण प्रनो माव के हित कर न वारे हैं ॥ जिन को प्राग लो ॥ कोलेन और
 अवतार ले तो विषय को छुड़ा के ॥ अति कीलन देस को के उद्धर हो ॥ इन की लो
 कैसी है ॥ जो स्नेस न हो ॥ सो श्री कृष्ण जी की लीला देख के व्यवव तुष्ट लाग ॥
 तब वह लीला मुने के जो मुकुंद जी समझे ॥ निन ह के मन आकर्मन करत रहे तो
 और जीव की कला कहिये ॥ तनु देवो जीव चहि यें ॥ प्रभु जीव को मन श्री कृष्ण
 की लीला आचरन कर ॥ जैसे और जो अवतार है ॥ सो मया दा सीत न हो ॥ सो वैदेही
 सों सि सा देत है ॥ जो विषय ने न के होत है ॥ और अधे कम मोक्ष देत है ॥ तब उन जी
 वन को स्नेस रहे नो ॥ विषय नो दृष्ट न हो ॥ और साधन दृष्ट न नाहि ॥ तो ते उन को
 उद्धर हो नो बहुत को दिन है ॥ और श्री कृष्ण जी की लो जा कहि न हो ॥ कैसी है जो प्री
 माच को मुखे दत है ॥ सो कहत है ॥ जो के जीव से स्नेह ॥ तिन को मन पुष्य में बहुत है
 अपने प्येताव तें ॥ तकीर क्षाने कम्प होत है ॥ ऐसी वृत्ति सीत है ॥ तब श्री ठाकुर जी
 नाना प्रकार की लीला मुने ॥ तब मुख हो ॥ सो न काल ने अपने पुत्र को तिन न सी
 क सिंद ॥ श्री ठाकुर जी की वाल लीला लागे जाय ॥ तब लीला प्रतापने अपने बाल क

को तुष्ट जानो ॥ जो उरो मन में अपने क अज्ञान को कल गायो ॥ तो अवरो मर जाय
 तो उर अने को ग सहित है ॥ ऐसी ज्ञान हो जाय ॥ कोरे को विषय में मन हो ॥ रासा
 द्विक लीला को मुने के लौकिक भाव हो ॥ तो वहन के मेरे ॥ और बहुत जीव और
 जो वे लो किरा में अपने मन को मुख मानव है ॥ और किने राजा की वासी मे प्रस
 न होत है ॥ तब वे श्री ठाकुर जी को मुद मुनेत है ॥ जो न रासिंध के प्रसंग में तब श्री ठा
 कुर जी पधरेत ॥ श्री वलो वजी सहित सब सेना मुद की है ॥ श्री वलो देव जी हो के ज
 एत ध को रथ ते पका मारन लो ॥ तब श्री ठाकुर जी ने कही जाय को अव हो नागे
 मत ॥ सा दारा बहुत उर जन को मार नो ॥ पा प्रकार १४ वार उर की प ॥ महा भाव्य
 भोष्पिता को समुख हाथ में ले के ॥ अल कावली छुड़े ॥ अपर रथ उर हो ॥
 स्मरण कान पाव लौकिक मुद जामें मुखता देखे ॥ सो न काल मूल जाय ॥ ऐसी
 श्री कृष्ण की लीला है ॥ सो सय के मन को रमावत है ॥ पा प्रकार कोर जीव को स्नेस
 न हो ॥ और जीव को कल्पान हो ॥ ई सन्सय न को रमावत है ॥ कोलेन राजा की आजा
 ऊपर न हो ॥ जैसे प्रतापवान श्री कृष्ण हो ॥ तिन में तिन के मन दृष्ट जाय को विषय
 प्रादे ॥ सो जीव सबीत म पर हो ॥ तब को भाग्य को पार नो ॥ ता को सविषय में
 कृष्ण हो दृष्ट मान होत है ॥ पा प्रकार भगवान जो अलौकिक सत्सप ॥ तिन के सव
 धने जीव को दृष्ट अ लौकिक ता को प्राप्ति होत है ॥ और संसार विषय जीव को द
 दृष्ट भाव होत है ॥ और इंदो न को होत है ॥ ताने श्री कृष्ण ने धार वा विनियो
 ग कर नो ॥ पा प्रकार १४ स्नान को अधि भयो ॥ अव और कहते हैं ॥ स्नान ॥ भगवद
 धर्म साम ध्यात विरोध विषय अधि ॥ गौरी मुष्य स्पर्श पद रं भाति को हो चित
 १५ ॥ पा को अधि ॥ अव वारि कहें ॥ जो मुने के श्री ठाकुर जी की लीला से सीत ॥ जो
 न के विषय मन को रमाव ॥ और इंदो न को भगवद लीला में लगव ॥ तो श्री कृष्ण प्रस
 न हो ॥ इंदो न को हित हो ॥ प्र लौकिक हो ॥ मन को हित हो ॥ जीव को भलो ॥
 सो प्रीति पुष्यीतम की लीला तो दुसाध्य है ॥ वरे वरे जो साधन वान आत्मा एमति
 न को पद वी पादे ॥ वसा द्विक और लीला योगी ॥ तिन को मन को तुष्ट होत है प्रसन्न
 होत है ॥ जो पेटु छ कलि काल के जीव बुद्धि कर के होत ॥ तिन को मन इंदो भगव
 लीला में कै से विनियोग होत है ॥ सो उन जीवन की बुद्धि मन श्री कृष्ण में लेगी
 श्री कृष्ण प्रसन्न होत है ॥ तब न को यो सब व्यथ हो जायगे ॥ तब जीवन को कला नि

निर-॥ रेखीसिधभये॥ औरणी पुरेतिनकी जोली जाते॥ तहां तो वेदह को मन न सीजाप-
 १२५॥ सकत॥ उष्टि मग कोलीलाको फलनारी जात॥ त्तेनेति नेति कहतें॥ तोपरसंग
 रजित नैवेदिक उपाय श्रीअकुरजी केरें॥ सोसवेवेदद्वारा प्रगटेरें॥ सोभगवदगीला
 वेदहने अगम्यते॥ ताते जीवकों प्राप्तेकेसेहोय॥ साप्रकार केरि प्रसन्नको नहां कहतें॥
 जोतुमकरे सोसाच भगवदलीला अत्यंत गोप्य है॥ चलाशिवादि को प्रपन्ननरि॥ अ-
 उभवनाहि॥ कहते॥ उनकेसाधनकोबलते॥ ताते भगवदलीला साधनकर अगम्य
 ताते ब्रह्माज्ञानी आदिकों उष्टिलालारसकी प्राप्ति नही॥ परनगि प्रगटे श्रीअ-
 र्यजीने कीयोते॥ तोयों साधनजी वस्तु नहीहें॥ और उष्टि मार्ग में जोसेवा उ-
 नगमते॥ सोभगवदही कृपाने सिधहोय॥ सोकेवलसाधन नही॥ फलसाधन
 और फलकोकवल ध्यान योगमेंहें॥ औरसेवामें स्वफलरूपसाधन होनेसे
 उनगम फलमें सेवाउनगम तावे परेकेवलसाधन हीन जाननो॥ परभगवद
 धर्महें॥ भगवानको रूपाने यह उष्टिधर्म सेवाउनगम वाद॥ यही धर्मको सामर्थ्य
 जाने हो॥ ऐसो श्रीआचार्यजी के उष्टि मार्ग में स्थित होय॥ ताके प्रभुके अगम्य
 हनेलीलाको अनुभवहोय॥ तासे जो जीव ताके विषय आदिनो कि वंसेसब
 आप वेगम्य करे के विषयको नासहीकरे॥ कहते॥ जेसा मध्य भाग जानमेंहें॥ सोजा
 नवादेहें॥ तैसेही भगवान अमुरन को भ्रि मन में वेगम्य उपजावे॥ भगवदीनकी
 रक्षाकर नहें॥ नहां कोई करे॥ तोभगवद उन तो अनेक जीवगावनहें॥ और उनको
 तो वेगम्य देवत नाहीं॥ संसार के विषय में लिपटारतें॥ ऐसो हंससार में देवतें
 साको नहां कहतेहें॥ एतेही सुवस्वयी नृदुरंभाति कहिंचित॥ काहेने भगवद
 उन तोगावनहें॥ भगवदपर नहीहोतें॥ भगवदसुखार्थ नही भावन॥ ताकोक
 लौकिक अर्थकर वर॥ भगवदउनही को पसनाहीं करत॥ तिरिनाम नही सुनत
 ताते या जीवकों हरिको सुवस्वयी नहीलेत॥ ताते यह जीवउनगा वनहें लौकिकरूप
 पावतें॥ और जो जीव भगवदसेवाउनगम निष्काम होयेंकेरें॥ तोय धर्मतीको
 स्पर्शको हरि सुवस्वयी॥ तब श्रीअकुरजी ह्मपादष्टिकें॥ तो पा जीवकों हरिकी लीला
 को अनुभवहोय॥ नवपा जीवको लौकिक वैदिक दुषं चक नहोय॥ ताकेदृष्टांत कहतें
 साधारन औषध सोभरिगो जाय॥ तैसेही जीव अनेक दुर्वामना करदुष पावतें
 सोभरीरोगहें॥ सोसकाम साधारन औषध नेरुग नजाय॥ जव निष्काम होय

नम्य सका अश्रयकर॥ श्रीठाकुर जो प्रसन्न होय॥ तब तीव्र औषध करस्वदुखजाय
 जेसेकाठकी अग्नि तेवेगभस्म होत नाहीं॥ और अग्नि के पुजेमें भस्म होय॥ तैसेही
 जव निष्काम उनगम करत श्रीठाकुरजी दृष्टमें पधारे॥ तो पाकों भगवदलीलाको
 अनुभवहोत॥ तो या जीवकों लौकिक दुखस्वप्रभुमें नहोय॥ साप्रकार १५ स्लोक
 को अर्थभयो॥ अथ और कहतें॥ स्लोक॥ स्वयं न्या ज्ञान मार्ग दुःख सो गुण व
 र्णित॥ अमर रत्न अथ श्रीवर्णनीपा सुहा गुण॥ १६॥ पाको अर्थ अथ तेंदेह के
 जोतुम ऊपरके॥ निष्काम होय भगवदउनगम करें॥ तो पाकों लौकिक दुखस्वप्रभु
 नहोय॥ सोलौकिक दुख तो ज्ञान मार्ग ही॥ विनहू को नही होत है॥ तानीकाह यह
 दुख नहीहोत है॥ तो परज्ञान मार्ग तिहो॥ भक्ति मार्ग में से सो कदागम करें॥ तहां क
 ततेंहें॥ जो ज्ञान मार्ग ने साधन भक्ति वोर जो असा बतार की भक्ति कर नहें॥ ने अर्थ
 कहें॥ तो उष्टि मार्ग अर्थ कहें॥ यों कहत कहनो॥ तो तोहो श्रीभागवतगीता
 में वर्णित हैं॥ जो मोक्षफल जानो कोहें॥ जो भगवानके स्वरूप में जीनहोतें॥ सोको
 दिनमें काहू को सिध नहोय॥ सो अमुरन को यागपद॥ भक्ते को यागपद॥ काहेने
 श्रीठाकुरजी प्रगट होय राक्षसन को माया उक्ति देनहें॥ नामें तो उह जीव को नास
 होनहें॥ ताको कवहें भक्तसको अनुभव नाहीं॥ सो नुष्टें॥ काहेने अमुरन
 को विरोध श्रीठाकुरजी देनहें॥ और भक्त तो वाक्य चारनाही॥ और ठाकुरजी मरतें
 जो भागे सोदज॥ परंतु भक्त कष्ट लेन नही॥ तोत श्रीठाकुर जो प्रसन्न होतें अगम्य
 देनहें॥ अथ आप भक्त वसरत हैं॥ जो पंचाधारि में भगवान ब्रज भक्तने कहें
 जो सुदोहें॥ मंतुम तो जिन नाही॥ सो नुष्टें॥ भक्ति समा में भेरे केरि पदाथि नही
 जो मंतुम को दज॥ ताते मंतुम होरि नही॥ ऐसे आप कहें॥ ऐ ज्ञान कर वरहोनेहें
 सो ज्ञान हो भक्त को उल्लेख जहां तहां वरन नहें॥ सो कहतें॥ ज्ञान मार्ग में जाता नि
 नको बुधि प्रमात्या में प्रवेस कर चुके॥ अपने आत्म ज्ञान में मग्न हें॥ सो जो स
 दज उनगम करतें॥ सो अर्थ कहें॥ यों कहत कहनो॥ सो आत्म ज्ञान में शुकोल
 जो भगवदहें॥ परभगवदसुख सुनत ही आत्म ज्ञान सुख लागे॥ ताब तो भग
 वद उनगम में मान होपगे॥ ताते ज्ञान मार्ग ते भक्ति मार्ग के उल्लेख अर्थ के
 जाननो॥ तहां कोई कहें जो उनगम देवता कारतें॥ तिनको नो मोक्ष दुर्लभ है
 सो उनगम को ऐसो मराम है॥ जो उबदे बतान को भगवद प्राप्ति नही॥ और देवता तो

निरो ॥ न्यायिक कृत करवें ॥ बाहिर की इंद्रीन के विनियोग करने ॥ सो इत्यंश को भोग
 ॥ १६० ॥ त्यहो इहो ॥ कहते अनेक जन्म में दुरुत पापादिक करवें ॥ मलीन हो रहें ॥ ना
 नित्य विनियोग को पते ॥ निछे आमुर बे सहो सो न हो ॥ या प्रकार बाहिर की इंद्रीन
 को विनियोग भयो ॥ सो अब भीतर की इंद्रीन को विनियोग हो ॥ सो कहते हैं ॥
 अवरो कीर्तन स्पष्ट पुत्रे हस्त प्रियेति ॥ पापो मृज्जास्त्यातेन सेवभागे तनो नैसत
 ॥ १५ ॥ या की अर्थ ॥ अब भीतर की इंद्री प्रकार की ॥ एक अमरा एक मन सो अमरा
 कर के स्वाक्रियान होय ॥ और मन कर के बाहर कष्ट काम न हो ॥ और अमरा मन
 को कपि हो ॥ जो मन न हो तो ज्ञान न हो ॥ और विना मन ने को तो फल सिद्धि
 सो चने को तो फल होय ॥ सो मन के विनियोग को उपाय करने ॥ जो प्रथम तो अ
 न के ॥ ताकर मन को विनियोग होय ॥ कहते मन को विनियोग हो तो बहुत कष्ट
 मन को तो निरोध श्री ठाकुर जी की कृपा ने होय ॥ अन्याया न होय कहते सब इंद्री
 सेवा करे ॥ और मन भगवद् सेवामें न होय ॥ तो सेवा सिद्ध न होय ॥ और मन भगवद्
 सेवामें होय तो ॥ तो उ श्री ठाकुर जी वाकी सेवा जोर ॥ और अवरो ने बुद्धि निमल हो
 कीर्तन ते मन हो निरोध होय ॥ या प्रकार इंद्रीन को भगवान में विनियोग करने ॥
 वह भाव बंदे न ता पूर्व पक्ष ॥ जो उमसव इंद्री न को विनियोग करे ॥ ना ते दो इंद्री न
 को विनियोग को न प्रकार होय ॥ के संलंघी की इंद्री के ॥ कपि हो ॥ एक लंघी भा
 मनि कपि ॥ और रिषी सो प्रलास कर के मन को त्याग ॥ पर तो लौकिक राते सो को
 सो पढ़े लिंग प्रकार कहते हैं ॥ जो उर में झुठरा विनते ॥ तो महा प्रसर को अ
 ने मिल के प्रवज होत है ॥ सो जल पान सो निवर्त होत है ॥ और तब बहरस सो सव
 देर में प्राप्त होत है ॥ सो र सुहा धन घोरे ॥ जो लंगीन कर तो सेवा में बाध करे
 ना ते ये इंद्री न सुहाये ॥ और इंद्री कर स्वो को मन्त है ॥ विचार सो करिये ॥ जो वि
 चार विना विषय को तो चांगल बन होय जाय ॥ कैसे जो परस्वी सो न करिये ॥
 निज स्वी सो ॥ द्यत एक दशो पूरा नो अंगि में न करिये ॥ तो जब विषय करे तब या
 विचार जो श्री कृष्ण को उच प्रीय प्रगट हो ॥ तो उर पुत्र भगवद् प्रपरा हो ॥ ना
 के भोग धर्म करे ॥ पर भाव विचार को ॥ पर विषय बाध करे ॥ अन्याय अ
 पना मुख बे चा को तो इंद्री मम सब बहिर्मुख होय ॥ और परस्वी सो महा दाय
 ना ने अपनी स्त्री सो रतिकर ॥ काम निवर्त्य धन या श्री कृष्ण प्रसन्न होय ॥ सो

काम को प्रगट हो ॥ ना ते जो काम को कपोल को प ॥ तो अने रूध को अने भान हो
 ना ते काम वासना उन हो को सुषे ॥ विषय में अपने सुख निविचार तो प्रसुप्त
 को विचारने ॥ या प्रकार विचार के निज स्वी सो को तो वाधान करे ॥ अवमल इंद्री
 को प्रकाश कहते हैं ॥ अवमल जो है ॥ सो महा प्रसाद को सांग रहे ॥ जना भी नि प्राप्त
 होत है ॥ ना ते समो सरोर उष्ट्र होत है ॥ ना कर मल को त्याग कर न हो ॥ तब सुष्ट होय
 नव भगवान के सेवामें काम आवे ॥ और जब तारि न ज त्यागन को तब तसेवा
 और कष्ट कान हो ॥ ना ते मन को न त्याग त्याग करे ॥ और जो विना विचार को तो
 प्राप्त हो ॥ कहते ॥ पृथ्वी सपे पृथ्वी चंद्र इन के अंगे न त्याग होत है ॥ तो त्याग करे
 तो सामर्थ्यवान होय ॥ तो भवत सेवा मली भाति सो कपि ॥ ना ते मन को त्याग
 सो सो देह को सुहाये ॥ और रन इंद्री न में ॥ तो जान इंद्री ॥ कर्म इंद्री ॥ तो ॥
 इंद्री तो भगवान की दासी है ॥ ना ते उन को भगवद् सेवामें विनियोग होत है ॥ और ये ॥
 इंद्री के निष्ठे ॥ प्रलंबी भगवान तारि पट्ट चन हो ॥ ना ते ये ॥ कनिष्ठ उन इंद्री की
 सेवा करे ॥ जैसे को भगवद् हो ॥ बाके हस दात न लान काये ॥ तब सुष्ट होय
 गवद् सेवामें जाय ॥ और दास को भगवद् हो को सेवा सिद्ध भरी ॥ सो भगवान की
 सेवा और भगवद् को सेवा सनेह ॥ सो ये ॥ इंद्री उन को सुष्ट करत है ॥ ता पक्ष
 न की योग्यता होत है ॥ पाछे भगवद् सेवा को अधिका होत है ॥ पाछे न इंद्री
 दास कनिष्ठ इंद्री को भगवद् प्राप्त होत है ॥ पा भाति सो ॥ इंद्री न को कपि करे ॥
 अन्याय करे तो होय ॥ १५ ॥ अब और कहते हैं ॥ सो ॥ पस्य भगवद् का पिय
 दास्यं न स्पते ॥ ना होय नृप हस्त्य दति अरति निष्किया ॥ १५ ॥ या की अर्थ
 जा प्रकार ऊपर कह ॥ ना प्रकार सब को भगवद् का पिय में विनियोग करने ॥ जो इ
 द्री अन्य पर होय तो मन न अन्य पर होय ॥ तो बजो के आमुर बे सहोय ॥ और
 भगवद् सेवामें सप्रेम श्री ठाकुर जी अग्र न होय ॥ तब भगवद् प्राप्ता हो ॥ ना तसदा
 भगवद् कार्यमें न त्पर रहो ॥ सो सब और प्रीति हो ॥ सो भगवद् कपि में सेवा
 राग इंद्री पर ॥ प्रीति तो भगवद् त्याग ॥ तो लौकिक नेरह ॥ सगेन वरि मुख हो
 ना तो इंद्री न को अवमल भगवद् का पिय में लावे ॥ जैसे नरी में को बलु बरो जा
 ते ता वा को को ॥ ना न को तो यह जले में व डो ॥ ने से तो पा सारा स मुद्र में
 इंद्री न गह ॥ तिन को से सार ते को ॥ भगवद् कामें लगव ॥ तो कल्याण हो ॥ ना

निरो॥ तोसे आरंभविषयसहितलो जाय॥ सब ईश्वर भक्ति को॥ तोते जोन कोनतरा
 १२८५ करे॥ पतिनै भक्ति नागे में दासहे स्वतंत्र हो॥ जानी अपने धर्म को विचार
 जो दास को धर्म भजन स्मारी॥ सोयह के संहार को॥ जो नमी को भगवत् प्राप्ति
 सो तो सव शरीर सुख जान करे॥ नागेन सो कहत है॥ नो इश्वर को जो तनो पर
 हो कहत है॥ ज्ञान को अस्वरूप है जिन की प्राप्ति॥ साक्षात् भगवान को प्राप्त नहि
 सो भगवान भक्त न की रक्षा करे॥ भक्त न को गिरे न दे॥ और ज्ञानी अपने साध
 न के बलने चनत है॥ तो ज्ञान को ईश्वर मान होय तो प्रकृत जाय॥ कहते उ
 हा साधन को बल हो॥ भक्त मार्ग को भक्ति को बल है॥ और जो लौकिक शास्त्रिक वि
 यपा सीत होय तो वाजीव को नासन होय॥ आगले जन्म भक्त प्रगट होय॥ भक्त
 वोजन हो जाय॥ और ज्ञानी जो विषय सीत होय तो जन्म जन्म को जान जात है
 ताते ज्ञान को साधन कहते॥ और ज्ञान मोक्ष ते तुच्छ॥ भक्त के साधन सुख
 ई जायें आत्मा को कष्ट न हो॥ महा प्रसाद सो निबोह करे॥ ताते बखव भगवत्
 कार्य में लौकिक दृष्टि न राखे॥ और ईश्वर को निग्रह करे॥ लौकिक ते दुष्ट पुण्य अने
 कि कर्म लगे॥ सो श्री आचार्य जी कहत है॥ जो परम पुष्टि मार्ग में निश्चय को सि
 द्धांत है॥ और उपाय प्राप्त को नहि॥ ताते जो ब्रज भक्त को निरोध भयो॥ तो अपरा
 र करे॥ ताते जो प्रकार पाये कहते॥ सो निश्चय करत है॥ अब सो समोक्षोक्त है
 ॥ **श्लोक** ॥ नातः परतरमेव नाना परतर रस्तव नातः परतरा विद्या तीर्थ नास्ति
 परतर ॥ २५ ॥ **पाको अर्थ** ॥ अब को रिके जो नम पर निरोध को प्रकट करे॥ सो
 पा उपरोक्त कष्ट और है॥ जाकर के प्राप्त होय॥ पर पर्व पक्ष करे॥ महा कहत है॥
 जो पा के उपरांत पुष्टि मार्ग पावे को और उपाय नहि॥ कहते॥ संपूर्ण भगवत्
 सास्त्र सर्व निरोध हो॥ सो इस मखंध परम फल रूप है॥ सो निरोध को प्र
 कार को ई जानत महता॥ सो जसा दे के लोपे श्री आचार्य जी सुबोधने जी
 कहते॥ जो बलि प्रकार चले तो निरोध हो॥ सो श्री आचार्य जी महा प्रभू उचु
 दि जीव को देख सुबोधनी जी प्रगट को॥ त्यों पुष्टि भक्त को निरोध बिना अंगीका
 र हो नो महा कठिन है॥ पर विचार के श्री आचार्य जी ने जो वन के उद्धार निरोध
 लक्षणाग्र्य को॥ सो यह निरोध लक्षणाग्र्य सुबोधनी जी को भाव है॥ सो कह
 नो यह सब पर जान नो॥ और यह निरोध लक्षणाग्र्य॥ सो सब वस्तु सिद्ध है॥

यो कष्ट नाहो॥ सो या समान और भक्ति को उपाय नहि॥ सो कहत है॥ या समान में
 यह नाहो॥ कहते॥ मंत्र को जपत जपत कहें कर्म को क्लृप्त होय॥ और निरोध होय
 नव बहजी वस्तु रूप भयो॥ जो जय निरोध हो॥ वे के जीये कर्म तरे॥ तो निरो
 ध समान को ई मंत्र नाहो॥ और पंचाक्षर अष्टाक्षर निरोध रूप है॥ उपाय तो पर है
 जो निरोध समान विद्या न हो॥ ताते श्री सुबोधनी जी श्री अष्टमार्गी ग्रंथ
 के भाव को व्याख्या न करे॥ सो विद्या को कार्य नहि॥ इन के भाव तो क्लृप्त हो ज्ञान
 सो निरोध रूप हो॥ पर तु विद्या पर के साधन के बलने कहत है॥ सो निरोध के आ
 ने विद्या तुच्छ है॥ और निरोध समान को ते धि न हो॥ ताते श्री दाकुर जी बिस
 जत है॥ तात ब्रज भूमी तीर्थ में मन लने॥ पर तो निरोध रूप है॥ कहते॥ नव भग
 वद गती के॥ तब सब तीर्थ नी चले और॥ तो उहां पुष्टि प्रहो नम विराजत है॥ अपा
 र तीर्थ प्रसीप है॥ सो सब निरोध के आगे तुच्छ है॥ परम पर न तोय॥ जो यह नि
 रोध के सो॥ सो पर है॥ जैसे श्री दाकुर जी ब्रज भक्त न को निरोध कोय तैसे श्री
 आचार्य जी महा प्रभू प्रगट को॥ सो पर॥ निरोध के सो है॥ श्री पूर्ण पुर्वी नम विरा
 और को ज्ञान न हो॥ ताते पर निरोध लक्षणाग्र्य प्रगट को॥ और श्री दा
 रिया जी कहत है॥ बाधकार पुष्टि मार्ग भगवद् की निरोध कहते॥ ताही रीत
 प्रमान चले॥ जो और न बनि और तो नेम सो भाव पूर्वक पाको पाठ को॥ तो श्री
 दाकुर जी को क्लृप्त भगवद् सेवा को पाप ताते॥ पाष्टि निरोध सिद्ध हो॥ ताते
 लक्षलक्षे या निरोध को चैन मन काने॥ ताते सब पाष्टि और निरोध सिद्ध हो
 ॥ **निश्चय स्वभावाय विरचित निरोध न स्यात् कोटी का भावा में संपूर्ण**
 ॥ **अथ सवाफल कीटका निरूप्यत ॥**

या इश्वर सेवना प्रोक्ता न त्सीहो फल उच्यते॥ आलौकिक स्वरूपे च बाधः
 सिध्यन्मनोरथ ॥ २॥ **पाको अर्थ** ॥ पासी कहते॥ पक्षकार जो सेवा प्रोक्ता करे॥
 सिद्धांत उक्ता बली विधे कहते॥ **श्लोक** ॥ न त्सीधो फल उच्यते तत को जो सिधान
 उक्ता बली विधे कहते॥ जो मान सो सेवा ना को सिद्ध कहें॥ पर साधक लो सते फल
 उच्यते कहें॥ विविध न जो अलौकिक साधन॥ मा पुत्र और सेवयोगी ब
 त वे कुठार विधे॥ जो पर तो नो फल है॥ सो सेवा फल विधे कहत है॥ पुन विधे
 तथा सन्यास भोग विधे जे सो भावना करे॥ सो ते सो फल होय॥ ये कहते

॥ सेवा ॥ सोयते जीवैः सो भावना करेगे ते से हो फल मिलेगे ॥ **॥ विविधेय ॥** फल को दे उन
॥ १२६ ॥ को प्रयोजन करे ॥ जो अवयव संदेह करुने हो **॥ सोक ॥** अलौकिक दान न हो वा
 सिद्धे न हो रथ फल बाध करे वा ॥ **॥ पाको अर्थ ॥** अवयवो हुनु अलौकिक सत्य करे
 अलौकिक सामर्थ्य को दान जब श्री गुरु जी करे ॥ सोहत सेने यद्यन नो रथ सो
 लां न पाने न्व को मनार्थ सिद्ध होय ॥ और जब श्री गुरु जी दान करे ॥ तो वह निवेद्य
 के फल करे ॥ सायुज्य अथवा अधिका करे ॥ सेवा योग देह वै कुंठा दि विषे स्थि
 होय ॥ सरर की योगता के विषय ना साधन विषे रहे ॥ तो तब अधिका को फल
 सो को वेने ॥ जो पद र को वे को करत है **॥ सोक ॥** न को लोचन पामक ॥ **॥ अर्थ ॥**
 अधिका विषे काल नियाम कन हो करे ॥ या को आर्ति न हो ॥ सो तो ने निरूपे ॥ सो
 याते फल करे ॥ जो काम को अधभय स्नेह मैरु सहद मैव ना निरूपे विधि न पा
 ति न न्यय तो हेत ॥ पावा का विषे काम को धाई को श्री गुरु जी विषे निरूपे विधान
 करे न न्यपता करे ॥ न व सायुज्य होय ॥ सो तब तो सो फल होय ॥ पद करे सो को
 सो दू करन को चरन करत है **॥ सोक ॥** उद्देग प्रतिबंधो बागे गो वास्यान ॥ सेवा करत
 जब उद्देग प्रतिबंध भोग ये लो नो प्रतिबंध करे ॥ सो तब सायुज्य न होय ॥ सेवा कर
 सेते दुष्टा दिकने न मन को भय ॥ प्रथा पा पाप करे के उधे को चंचल से ॥ उद्देग सो
 न सो को प्रतिबंध के सेवा विषे रुचि ॥ सरर को सामर्थ्य है ॥ और सेवा करे के से
 लौकिक वीर्य कर्पादिक व्यापार सो वारी सेवा को प्रतिबंध ॥ उरबुद्धि ज्ञान प्रीति
 सोपा सेवा सो भोग और है ॥ और शिरो उने के विषे है ॥ सो सेवा और मान सो सेवा
 है ॥ उने के प्रतिबंध ते मान सो उतम न होय ॥ सत न्यपता सायुज्य न होय ॥ अलौकि
 क सामर्थ्य तो दान साध्य है ॥ जो दान ते जो न्यो जाप नहीं ॥ सो तब मै सेवा करत है
 सो अपेक्षा फल मिले ॥ अवयव संदेह को दू करत है **॥ सोक ॥** तु वाध के अकर्त
 व्यं भगवत ॥ सर्व वाधे द्वीत नो हय धावा **॥ पाको अर्थ ॥** तु से का निरासे में बाध के
 बाध को न ॥ तो अकर्त व्यं भगवत सर्व वाधे चेत करे ॥ श्री गुरु जी को सर्व वाधे
 जो न होय ॥ तब निवेद्य के गति न करे ॥ पान को हेत उच्छ्रान नहीं ॥ सद्यो मुनि ॥ अ
 यवा श्री गुरु जी ने ॥ अतिरिक्त जो वस्तु तब विषे मन की गति न हो ॥ नाना विद्वान्
 सेवा के विषे करे ॥ जो एक तान न्व से संय ॥ पापकार उरव्य फल आ प्राप्त को संदेह को
 जो सर्व वाधे होय ॥ यवा पथ हाद बाध के ॥ अकर्त व्यं भगवत सर्व वाधे न ॥ **॥ अर्थ ॥**

अतः परोपया करे ॥ जा प्रकार के सेवा ता प्रका बाधक ॥ जोति न पूर्णति वाधक
 श्री गुरु जी को सेवा न करे न होय ॥ तो बाध करे ॥ फल विषे कल्प सेवा मध्य होय
 तो मध्य मफलति होय ॥ तो निरूपे फल ॥ पाभाति फल को विषे संदेह इरवे ॥ सो
 तब फल विकल्प विषे कता करे ॥ सो करत है ॥ **॥ सोक ॥** प्रत्यक्ष निरूपे विषे सा
 धनं मनं बाधकाना पोत्याग ॥ प्रवोक्त साधन को अतः निरूपे और अविषे
 ता को परि त्याग करे ॥ पर धन न्व को सो होय ॥ यहा करे ॥ जो स्वतः को निवेद्य सत न्व
 निरूपे ॥ विवेक हो ॥ सर्वति निजे छात करे ॥ योति ॥ यहा करे ॥ नो विवेक सो को
 सो ताते अतः न्व निरूपे ॥ और विवेक को परि त्याग होय ॥ ता को के तो न्व बाधक न करे ॥
 सो ता पाछे जैसी फल सेव तै से बाधक त्याग करे ॥ सो तो ते भाग त्याग आये ॥ सो
 तब सीरी की स्थित को र हो ॥ और दान सेवा के होय ॥ ॥ प्रतिबंध जो है ॥ तो अदृष्ट
 जन्म हो ॥ सो ता को त्याग ॥ और जब तारे प्रतिबंध को त्याग न होय ॥ तब तारे सेवा न के
॥ सोक ॥ भोग्ये के न्यपत ॥ **॥ पाको अर्थ ॥** अपि सब दान न्यप विषे न करे ॥ सो
 ता को ग्रहण करिये ॥ भोग विषे न्योग करे ॥ एक सो न ॥ भोग अस्कार को हो ॥ सो लो
 किक भोग को नो ॥ अपि सब प्रतिबंध को नो ॥ जो प्रतिबंध अस्कार को है ॥ जीव
 कृत को नो ॥ भगवत कृत प्रतिबंध को नो ॥ पद ज्ञान नो ॥ जो श्री गुरु जी फल न
 है ॥ नव उरु बाध के सेवा के नो ॥ सो उक्त ॥ सो सेवा तो असुर से ॥ आ
 प सो क दू करन निमित प्रपंच के विषे अस्कार ब्रह्मात्म कते न भावना को ॥ तथा
 वेरांतर विषे जरित सो अस्कार ब्रह्म को रपा सना करे ॥ तारे त सो को ॥ सेव अ
 स्कार ब्रह्म की प्राप्त होय ॥ सो लो ॥ भोग साधन प्रतिबंध को नो ॥ भोग को नो
 सप्तम दान माहा न भोग प्रथमे विसेत ॥ सप्तानंतर भोग करे ॥ अलौकिक
 जो भोग ॥ सो प्रथम अलौकिक सप्तम धर्म ॥ क सता विषे विषे सो करे ॥ प्रविष्ट
 है ॥ जो लौकिक भोग को नो ॥ सो हेतु करत है ॥ **॥ सोक ॥** सर्विष्टो ज्ञो यान क
 स्यात् ॥ **॥ पाको अर्थ ॥** लौकिक भोग जो हो ॥ कान्धारिक विषे सप्तम घात को ॥ प्रीति
 धरे ॥ सो पात को नो ॥ प्रतिबंध त्याग करे ॥ सो पूर्व करे ॥ फिर परो करे ॥ सो ता
 को भोग जन करे ॥ सो करे ॥ जो अवयव संदेह करत है ॥ **॥ सोक ॥** बला से तो सदा
 न तो ॥ **॥ पाको अर्थ ॥** ये करे ॥ लौकिक प्रतिबंध साधारण ॥ भोग लौकिक सदा है ॥
 जो दान दान विषे प्रतिबंध विचार नो ॥ ज्ञान मार्ग विषे स्थित न हो ॥ नव जीव

सेवा॥ कोचिंताहोष॥ सोकोकराफलहोइगे॥ ताकोदूरेकोकहतहें॥ **सोक** द्वितियेसर्व
॥१६७॥ चिंतात्याज्यासंसारनिश्चयान॥ **पाकोअर्थ** द्वितियेनो भगवत्कृतप्रतिबंधसो
हेतुसंते॥ संसारनिश्चयानके॥ जोकोसंसारने अत्यंत अभिनिवसनेसवे
छावते॥ अविषयचिंतात्याज्याके॥ फलविषयनोचिंताछोडनी॥ संसारविषय
तअभिनिवेशहें॥ सोफलकोप्रतिबंधकहें॥ तातेअक्षरब्रह्मकीप्राप्तरूपफल
ताकेप्राप्तेकेनिमित्तसंसारकेअभिनिवेशछोडने॥ प्रतिबंधछोडने॥ जोउद्देग
छोडने॥ कोहेते॥ परसेहेतुदूरकरतहें **सोक** तत्वाद्येद्वान्दतीनास्ति **याकोअर्थ**
सोसंसारकीनिरासविषयआद्यजोउद्देगसेहोतसंतेनकरे॥ फलसाधनविषय
नोचिंताछोडनीनहीं॥ सोतहेंहेतुद्वान्दतीनास्ति अलौकिकसामर्थ्यरूपजो
फलताकेअप्राप्तविषय॥ श्रीठाकुरजीकोफलदेनोनाहींहें॥ औरउद्देगतोमानेहे
सोमानसोकोप्रतिबंधकहे॥ तातेउद्देगतोसंते॥ उद्देगदूरकरेकोभगवत्
भावनरूपचिंताकाने॥ तत्त्वनिर्धार औरविषयकरकेप्रतिबंधकत्यागवि
षयत्वकरतहें॥ औरप्रतिबंधदूरहोयनहीं॥ तहांकहाकारने॥ परसेहेतुदूरकरतहें
सोक द्वितियेग्रहबाधके **पाकोअर्थ** द्वितियेनोभोगरूपप्रतिबंधसोहेतुसंते
ग्रहबाधकहे॥ सोभोगकोहंनछोडते॥ तवश्रीठाकुरजीकृत्यागहें॥ जोपर अतुल्य
घनकरकेछाछोडने॥ भोगभावतवसिंहोय॥ सोअवस्यछाछोडने॥ जोपर
छोडनेकोसामर्थ्यनहीं॥ तवकरकरे॥ सोकरतहें **सोक** ॥ अवस्ययसदाभावा
याकोअर्थ ॥ परकरेफलचर॥ औरप्रतिबंधकचर॥ जोअवस्यनिरंतरभावा
करत॥ सोजवप्रतिबंधकहोय॥ अपनीहीनताथेविचारनी॥ फलसोभगवत्
तविचारसाध्यहें॥ जोहीनतापूर्विकभावनाकरना॥ **सोक** सर्वजन्यनम्रनो
धर्म **याकोअर्थ** ॥ सर्वजन्यचकरे॥ तनसाधनकरेंगे॥ जबफलहोपगे॥ और
प्रतिबंधदूरहोइगे॥ परभावनेतमनहें॥ सोधुनकरें॥ बहिर्मुखताउपजेवि
ताचांचल्यमात्रसो जबश्रीठाकुरजीकेआधीनहें॥ सोतवभावनकोकारप्र
योजना॥ जोअवसंहेदूरकरतहें॥ **सोक** तद्विषयैषितत्कार्यं **याकोअर्थ** तद्विषय
करे॥ सर्वसमर्पनऔरसर्वप्रकारने॥ श्रीठाकुरजीकेभावननेजोभगवत्हें
नेऊपरहलंभावनकरें॥ सोकरे तहांकरतहें **सोक** ॥ उपर्योनेद्विलंबसेप
काहेद्विलंबनकरें॥ जोउपर्योनीगंधविषयसाधनकेउपदेसकीपेरे॥ सोतो

श्रीठाकुरजीसाधनद्वाराउपदेसउद्धारकरेंगे॥ पासाधनविनाकरेंगे॥ सोतोही
जानपरे॥ तातेद्विलंबकेअभावकेनिमित्तसाधनकोउपदेस॥ सत्यरजस्तइ
तिगुणजीवस्य॥ नैवमेचिंत॥ चोपेस्तुभूतानासज्यमानोनिबंधयत॥ परस्का
इसस्वकथकोवाक्यतेचिंतनेउपजे॥ जोउद्देगासत्त्वाजनमतेकालकर्मस्वभाव
वस्य॥ तेसोभकूनीपावतसंते॥ प्रतिबंधकरेतवकराकरना॥ सोकरतहें॥ **सोक**
गुणसोभेपिदृष्टव्यमेतिदेयतिमेमांति॥ गुराजोसत्यरजस्तम॥ तिनकोसोभ
जोउद्देगादिकभाव॥ सोभगवदाधीनहें॥ तातेउहांहंसतेहवकरे॥ भगवत्कृत
किंतवजोहे॥ सोरिक्तनेहवना॥ रजिमेमतिबहे॥ जोमेहंकराहें॥ औरकीसा
मर्धनही॥ तहांकरतहें॥ **सोक** कुअष्टिरज॥ वाकाचीइत्यधेतसर्वधर्म **याकोअर्थ**
अर्थ ॥ सास्त्वविषयमेहकेदूरकरेकोनिमित्तसाधारनकोउपदेसोदरवतहें॥ ता
तेसाधनान्तरतेगुराचलजोमायासोदूरहोइ॥ जोकराचितपरकरें॥ सोरिक्त
विरुद्धयते॥ सोकुअष्टिबाधकरे॥ जोविकल्पकोकेइत्यन्तोप॥ सोधर्मकोहेत
देवोकोसोगुराभयो॥ मनप्रापादुरत्यया॥ मानेवयप्रधत॥ मायामेंनातम्य
तेपर॥ गीतावाक्यविषयमायादूरकरेकेनिमित्त॥ श्रीठाकुरजीनेअपनीसतन
हीसाधनकसोहे॥ औरसाधनकरकेनिषेधमायाकीनिरूपनहोय॥ सोत
तिहमने॥ श्रीठाकुरजीकोअभिप्रेत॥ जोहेसोइकरतहें॥ इति श्री श्रीराय
जोक्ततटीकासेवाफलकीसंपूर्ण॥ **अर्थ** मधुराष्टककीटीकालिखत
अवप्रथमश्रीगुंसांजीश्रीआचार्यजीकोनमस्कारकरतहें॥ कोहेतेयहजोन
धुराष्टकग्रंथश्रीआचार्यजीप्रगटकीपेरे॥ सोअत्यंतसद्वपरे॥ जितनेसहें
सोसबमधुराष्टककेभावमेंभरेहें॥ तहितेश्रीआचार्यजीमहाप्रभूमधुराष्ट
केभोताहें॥ सोआपसदाभोगकरतहें॥ औरलोकांनमेप्रगटनहीकीया॥ ताके
प्रकासकरेकेयोगश्रीगुंसांजीप्रगटभयेहें॥ तातेजाप्रकारश्रीआचार्यजीम
हाप्रभूमधुराष्टकप्रगटकीपेरेहें॥ सोमंगलाचरामेंश्रीगुंसांजीसबवर्णनकी
पेरे॥ तांमेंपरकरे॥ जोश्रीआचार्यजीकेचरीकमलकेआश्रयविनामधुर
ाष्टकीप्राप्तिनही॥ तातेमंगलाचरनकोप्रथमश्लोककरतहें॥ **सोक** नमोतुता
शनेमधुरप्रकासेयनपरापरा॥ त्वमलीलायामता॥ भावनेकरितग्रह॥ **सोक**
याकोअर्थ ॥ अवप्रथमश्रीआचार्यजीकेचरीविहिकोनमस्कारकरतहें॥ सोकरें

मधु॥ नमोतुनाशने। ताको अर्थ यहे। जो श्री आचार्य जी विप्रयोगात्मक आधि
१६५॥ विक्रमि रूपे। तिनमें ये ग्राहें। जो संयोग रस अमृतता को प्राप्त हो। ता
 हां ताई जा बेह रूप में श्री आचार्य महा प्रभुन आवें। ताको तहां तारि पुष्टि पद प्राप्त
 ताते विप्रयोगात्मक अग्नि के आश्रय संयोग रस हो। सो रस रूप श्री आचार्य जी
 मधुर आगे नहें। कोहेने। जितनी मधुर सामे धीरे होते। सो रस अग्नि के संय
 धते होतें। ऐसे श्री आचार्य जी विप्रयोगात्मक मधुर मधुर हें। जिनके अ
 श्रय ते लीला के भाव रूप संयोगात्मक रस की प्राप्ति होय। ता होतें श्री आचार्य
 जी अलौकिक अग्नि रूप हें। ताते बह पुष्टि मार्ग परम रस रूप मधुर रस हें।
 जे के भाव रस अमृत सों। प्रपते सब क न के हा नार्थ यहे रस प्रगट कीये।
 और श्री आचार्य जी सदा लीला रस अमृत समुद्र में विराज रहतें। ताहे
 श्री आचार्य जी कृत ग्रंथ महारस रूप हें। कोहेने। कोई कोयान चतुर्दिके
 कोरि के देवता के आश्रय हें। तिनमें रसन हो। कोहेने। उनको लीला रस
 अनुभव नही। और श्री आचार्य जी ने जोग्य कोये। सो आप श्री ठाकुर जी
 संग सहा लीला करो। ताते अत्यंत रस रूप वचन हें। सो तत्काल फल होतें।
 नामें यहे मधुराष्टक ग्रंथ हें। सो प्रेम रस कर के मत होय। हृदय में रस उमरे।
 सो जहर प्रगट भयो। सो श्री गुरु शिष्य न कलहें। श्री आचार्य जी से वा
 मिश्री संग। सवरीत प्रगट करे। आप सदा श्री गोवर्धन नाथ जोगोव
 न परत के ऊपर श्री पशुना सहित विराजते। तहां नित्य लीला प्रगट हें।
 हां श्री नाथ जी की मंगला आर्ती कर। ताहि न श्री स्वामि नी जी के जे मोक्ष
 की अष्टमी हती। ताते अभ्यंग स्नान कराये के। ताहि न जन्म श्री आचार्य
 तहें। सो अंतर सम्यो। सो प्रेम में दिवस होय। संगे श्री अंग को अनुभव
 हृदय में कोये। ताहर गुरु रत संगे प्रगट करे। सो आंग करे। ताते यहे जो मधु
 राष्टक ग्रंथ हें। ताको गोप अपने हृदय में पाठ करे। तो याको भाव श्री आचार्य
 जी की कृपाति सिध होय। ताते मन को विचार के हेरे। जो मेरा मन स्वास्थ प
 हो। ऐसे विचार रस ग्रंथ न का भाव विचार। तो पर महित को पावें। तहीं नो भ्रष्ट
 जाय। ताही न श्री आचार्य जी सिद्धा के पंथ प्रकट कीये हें। अब मधुराष्टक
 का प्रथम श्लोक कहत हें। **श्लो॥** अधर मधुर वदन मधुर नयन मधुर हृदय

मधुर जगन मधुर मधुराधिपते रति लं मधुरा॥ **१॥** याको अर्थ प्रवचन अधर
 मधुर में नाना प्रकार के भाव हें। श्री ठाकुर जी के अधर के से। प्रहारा सो भा
 देत हें। जिनके अंगों विवा फल ज जायमान हें। ऐसे विवा पल पर शुक्र नासि
 कोहोये वे होतें। सो मानो विवा फल की रसाधि वे होतें। ऐसे अमृत स्वरूप
 और अधर के ऊपर नासिका में वे सार हें। सो अत्यंत सुख उल्लस हें। सो मानो
 मुक्तान होतें। मानो बक परम सो भावमान आपो हें। सो दूते अपने भोजन जा
 न जवनिकट आये। तब चतुर धनुष जो भुंटी हें। और नेत्र के कटाक्ष रूषी
 बानन सो बक को उरये। या प्रकार वेध के नासकारूप जो रवे भैं। तहां बक
 छी चार को कंचन रूपी जेवरी सो बांधे। दूसरे भाव। शुक्र जो अधर विंदी
 रक्षा करत हें। तिन अपने मन में बांधे चारों। मत करू मेरे भोजन ले। ताते शुक्र
 ने वक को हृदय वेध के अपनी चोच को बोध के बांधावे। अथ बाबक ने
 सो नासिका को पाइन परत हें। जो महारस मुखा विंदे में हें। तहां जो को जानें। में
 तो कंचन हें। सो सुक नही लत। सो परस्पर वातें करत हें। अथ वारिदा
 फल जो अधर हें। और करी में भरू कृत जो कुंडल हें। सो दोऊ भय पोष। सो
 विवा फल पर जाय। जो शुद्ध मेरी देरी आपो। सो विवाधर और कुंडल आपस
 में विचार कोये। जो उन दोऊन को बांधि नासिक रूप रूप में डार होये। या प्र
 कार शुक्र और वक को कंचन की जेवरी में बांधे। सो कूप धनुष नासको के जो
 सो कूप को मुख छोरो। और शुक्र वक बे। सो दोऊ जो धरे। ताते उन दो सक्त
 से सो उपमा कहो। जो फेर अधर के से हें। जिन की छावें छेव के स्वामि नी जी के
 उत्सव स्नेह रगोत न निर्विकार। सो रमानो मुता फल उल्लस हें। सो अधर रस
 के पान को आपो हें। तब रस पान कर मत होय निनुन संगे तब नासिका रूप
 रंघो को पकर धूमत हें। अथ बा अधर रस पान को। तिन को मत होय के रंघो
 पकार की सुध कहो तरे हें। जब श्री स्वामि नी जी मुता रूप हें के सपान कोये
 तब देहान संधान भूल गं। तब श्री ठाकुर जी ना सकारूप जो घरतें। हावा
 तहां बेठार गरे। तोमं श्री ठाकुर जी न श्री स्वामि नी जी सो पर जतये। जो तुम मेरे
 अधर रस पान को कोये। तिन को त्याग हो के संकट। तोमं मेरी अधर रस जो
 सिज्या हें। नासकारूप घर में तुम सदा विहार करो। और श्री ठाकुर जी ने श्री

॥ मधु ॥ पिने जो सोव जतोये ॥ जो नुपविना स्नानाकल नही परत ॥ ताने मेरे जनासिका
॥ १६२ ॥ रूप धर मे सदा विराजे ॥ सा भाने कटिके नासिका मे स्वामिनी जी को भाव
 रिव के अपने घर रूप जो सिज्याहे ॥ और १ समे श्री आचार्य जी श्री नाथ जी को
 संगार करतें ॥ सो श्री नाथ जी हंस संके जै से वस्त्र आभूषण करे ॥ सोरि श्री
 आचार्य जी धरवें ॥ तब श्री नाथ जी श्री आचार्य जी सोंकरे ॥ जो ब्रज भक्त को
 अति सुख देतें ॥ ता सो मोको प्रान प्रियतें ॥ तै से हेनुम को को सुख देतें ॥ ताने
 म और ब्रज भक्तन से १ सन दर नही रहें ॥ तब श्री आचार्य जी पर सुन मेद मुक्ति
 का ॥ अत्यंत स्नेह से श्री स्वामिनी जी को और कटाक्ष करे देय ॥ कहते ॥ आप
 श्री स्वामिनी जी के भाव रूप ॥ सो श्री आचार्य जी के देखते हैं ॥ मानो कोरि कंचन
 की लता श्री अंग को चाक चिकमाने ॥ कोरि दूधन कोरि दामिनी कोरि दसि ल
 ज्जा को पवतें ॥ ऐसे रूप से श्री स्वामिनी जी पधार ॥ सो मानो कोरि अंगार स
 आपरो धर के स्वरूप ॥ मानो मतंग जगज सो मत्स्यो ॥ घूमत लुकात तां ल
 ओ मय मेरे धीरे धीरे ॥ आभूषण को गूढा कर के ॥ श्री नाथ जी की दृष्टि सो नचा
 रें ॥ पाछे तै आप के श्री नाथ जी के गुण कमल को चुवन कीयो ॥ सो पीक की
 छाप को लन ऊपर ॥ होऊ और जो अधर स ॥ ता की १ लो क की छाप लागी
 नामें द्विस्तात्मक स्वरूप को दो डुलेख प्रगट कर जतोये ॥ सोर स रूप श्री गिरिधि
 न नाथ जी के कपोल में छाप देव के ॥ श्री स्वामिनी प्रेम विवस हो परती ॥ और
 श्री गोवर्धन नाथ जी निहार चक्षुन तेरे ॥ सके भर के उपर तेरे चकल
 जित भये ॥ और हृदय के भीतर धर मर स के आनंद को समुद्र उम गयो ॥ तब
 हृदय देव श्री आचार्य जी के धाम आनंद भयो ॥ सो प्रेम को अनुभव की
 पोछे सवादर उम गयो ॥ तब पर करे ॥ अचुरं मधुर नाम ॥ अधर ब्रज भक्तन से
 अनुभव में अत्यंत मधुरतें ॥ सो सवर सके भोता श्री आचार्य जी हैं ॥ जो अध
 र मधुर तो अधर स से सदा भरो ॥ पंहु आन अति मधुर स रित लीला को
 स्मरण करावत सो भाइते ॥ फेर श्री आचार्य जी मन में विचार ॥ जो जिन के
 अधर को सो भाइते तें ऐ सो मुष उपजत ॥ सो जो अधर को पान करतें ॥ नि
 न के आनंद को अनुभव नही करे जान ॥ ऐसे हृदय में विचार प्रेम में विखल
 होय ॥ आप श्री गोवर्धन नाथ जी को आगार करत ॥ भी न सो अधर श्री स्वामिनी

जो रूप हैं ॥ सो इन हृदय नगयो सो अधर अधर चुवन कीये ॥ फेर आप करतें
 अधर मधुर ॥ जै से कोरि मधुर वलु बाप वखान करे ॥ जै से श्री आचार्य जो आप
 भोता को के पाछे बगान कीये ॥ ताते श्री आचार्य जी के वचन स्वरूप जान कर
 ने सुने ॥ तब श्री गोवर्धन नाथ जी मुक्त काय के श्री आचार्य जी के रूप ते लप
 र गये ॥ सो श्री गोवर्धन नाथ जी अधर मधुर हैं ॥ पर श्री स्वामिनी जी के मुख को
 पीक तिन की छाप जो लागी ॥ ताने अधर विंद अत्यंत सो भाइते हैं ॥ सो श्री स्वा
 मिनी जिनित्य अंगार में पधारतें ॥ सो गोवर्धन नाथ जी अपने मन को अंगार
 श्री आचार्य जी द्वारा करावतें ॥ और अंगार भोग को सामि प्री श्री स्वामिनी
 जी के मनो रथ कीये ॥ ताते श्री स्वामिनी नित्य पधार मध्यान सम को संकेत श्री
 नाथ जी को जतावतें ॥ ताते अधर पर मन में अधर ॥ जो अपने मुख में जेत
 ल स सो सुंदर रंग भयो ॥ अपने मुख विंद सोई छाप ॥ ऐ सो छाप रूप मुख कम
 ल ता वल स रूप रंग में भर के ॥ श्री नाथ जी के अधर रूपी जगद तामें आप दीने
 नामें पर भाव सचित कीये ॥ जो फलानो दार स भोग पोछे ॥ गो चार लीप स पधा
 रियो ॥ तहां में अंगुली ॥ या प्रकार संकेत जनावतें ॥ अधर श्री स्वामिनी जी
 जान्यो ॥ जो श्री ठाकुर जी ब्रज भक्तन के मन को हगा कीये ॥ ऐ सो विचार ब्रज
 भक्तन को पर जतोये ॥ जो श्री ठाकुर जी हनो वसते ॥ और के अनुभव में नही अधर
 ऐसे नुमाव स नही हैं ॥ कहाचि त श्री ठाकुर जी कह पधारें ॥ तो श्री स्वामिनी जी कूं
 न्यारि नही करे ॥ और छियार रूप दानें ॥ ताते लील त विभेग श्री गसाई जी
 लिखे हैं ॥ जो पर ललित त्रिभंग स्वरूप को अनुभव श्री स्वामिनी जी लीजाने
 उन लं अथेय स प्रगट भयो ॥ ताते ब्रज भक्तन को श्री स्वामिनी जी के चरन
 सेवन ते रस की प्राप्ति होय ॥ या प्रकार अधर मधुर को ब्याख्या न करे ॥ अवबल
 मधुर करे ॥ जो बदन समस्त मुख विंद को नाभो ॥ जै सें च प्रसय के देव के
 पर चंद्र माते ॥ पर सय दे पर काह के ॥ करण नासिका धर रोखत नही ॥ कहते
 ते जेत ॥ तै से ई रहां कोरि के हृदय च न्य की छवि कोरि च श्वा र डारियो ॥ ऐसे मु
 खी विंद के देव भक्तन विवस होतें ॥ पर मुघन ही रहत जो म्पोगे न्यो अंगन
 को अवलोकन कर सकें ॥ ताने कह वदन मधुर ॥ और १ समे श्री आचार्य जी प्री
 परमा कर श्री गोवर्धन नाथ जी पधार ॥ तहां श्री गोविंद धार हो ॥ नहाछों कपोल

॥ मधु ॥ केवल भगवत् स्वरूप होतें। नहं सकलमें श्री आचार्यजी महाप्रभु होते। नोवन
॥ १६ ॥ उद्धार को धिंताकार नहं। तो आर्धरात्र को श्री ठाकुरजी ने आज्ञा दी। नो जल
 धरा श्री सोद से न कर दो। स्वरूप को रक्कत ना देख वदन मधुर करे। नो नवन
 कमल में कपोल चिउक गंग स्थल में वदन मधुर के भीतर सब भाव करे। नहं नवन
 क श्री चंद्रावली जी के भावने बिगजतें। ताही ते चिउक पर श्री नाथ जी होतें को पा
 तें। श्री ऊपर करे श्री ठाकुरजी विसा धरे। तो श्री स्वामि ने जी को भावते। नो
 श्री भिषय कहते। जो अधराभूत को अतुभ व कावे योग्ये। तो ऊपर ने नवन
 तिन ते उतरतो श्री चंद्रावली जी। नो श्री स्वामि ने जी के अधर उभर बिगजतें
 नास को के वसरूप। श्री श्री चंद्रावली जी के अधर नो चं विराजतें। नो भाव
 यरे। जो श्री स्वामि ने जी के पोषा को पोषे। श्री चंद्रावली जी को रसपान का
 जो प्यतों। कोहे सवि अधराभूत को पान श्री स्वामि ने जी का तें। जो पान का
 नें श्री ठाकुर जी के मुख ने रस वहतें। तो चिउक पर आवतें। नहं श्री चंद्रावली
 जी विराजतें। नो ते उनमें यह भाव विचारने। जो ठाकुर श्री स्वामि ने जी। नो
 उतर के श्री चंद्रावली जी। तिन ते उतर के श्री भक्तें। तिन को अंगे न रूपन का
 तें। जो को पाल पर श्री स्वामि ने जी स्थान अलकन में आविर्भवि जानने। को
 पमुना एक में श्री आचार्य जी वरिण कोये। जो श्री पमुना जी कमल तिन प
 प्रभु गंजार करतें। मेरि श्री पमुना रूप में श्री उसरि जी कहें। जेसे श्री प
 ना जी के कमल तें। तेंसे श्री ठाकुर जी को मुख कमल तें। अधराभूत भीतर सा
 र रस तहं अनक भक्त प्रभु रूप विलास करतें। रसपान करवे को लोपें। मेरि
 श्री पमुना जी अलका वली रूप होतें। उरव कमल में विहार करतें। नहं श्री पमुना
 जी में मीन आवि करतें। तां अलका वली के नि कट म करान कुंडल अन
 क भूषणें। रसे वदन कमल को वदन मधुर करे। श्री ठाकुर जी के नवन कमल
 के से। मधुरें कोहे। जो भक्त को कपड़ा कर देवतें। ता भक्त के पान होत
 तें। तिन को दान करवान कोये। कोहे वानें। सो जा के नागतें। ता को भी
 तर साल तें। सीर होतें। ता को कष्ट मुध नाही रहन। नो जो ते नेत्र को वान का
 निरूपन कोये। श्री ठाकुर जी के नेत्र कमल के से। श्री स्वामि ने जी के मुख
 व कमल को देव द्योत होतें। श्री अरुण तें। सो नो श्री स्वामि ने जी के

अनुभा देवतें। श्री ठाकुर जी के नेत्र कमल के से। जो नेत्र में मंदरास्य
 मृत् भर होतें। तो गोपी जन धरम चतुर तें। सो लखन तें। जो नेत्र कमल के
 भाव को श्री के रिजा न तन हो। एक भक्त जान तें। सो कहतें। जो श्री ठा
 कुर जी के नेत्र कमल में धरस समुद्रें। प्रथम तो कोटि के पेलान् मृत समु
 द्रें। १॥ दूसरा मंदरास्य मृत समुद्रें। २॥ तीसरा चापल्य मृत समुद्रें। ३॥ चौथे
 अरुणा मृत समुद्रें। ४॥ ता को भाव कहतें। जो कोटि के पेलान् मृत समु
 त को कला मुभावतें। जो वक्र ना म होय नो कोये। जेसे गज के अणव अणु सु
 रहतें। नो ते गज वसरतें। तेंसे ब्रज भक्त के मन रूप जोग जें। ता को श्री
 ठाकुर जी ने वक्र दृष्टि से मात के अपने वस कोये। नो कल धन संगे गोपी जन
 रस पंचाध्य में अरि। श्री अरुण रस को यह भावतें। जो प्रथम तो उन को व
 स कोये। अरुण को पालन करे। चरिये। कोहे। नो श्री ठाकुर जी को सरज
 धर्म तें। तो रसा करी। नो ते ब्रज भक्त के मन को अपने पास रखे। मेरि सा
 वृत कर पोषा करे। नो ते फेर ब्रज भक्त के मन उन के पास नही गये। ता
 श्री ठाकुर जी के नि कयी तें। जेसे जो कधुर वस्तु खा तरें। ता के धावन हो
 जोहें। श्री पर तो मेरि सास्य मृत। जो मे अधराभूत सो मे लोय रस। ता को पान
 करे के मस्त भयो। तो जा उवे को अपेक्षा नही कोये। तो सो रस को भाव ब्रज भ
 क्त को अने प्रकार के काम के भावने चंद्रास चन करतें। जो वहन
 चपलने चहायें। तो भक्त को श्री ठाकुर जी श्री भिषय जतावें। तो सब भक्त जान
 ताही ते चपलने चको पर भावें। जो जा भक्त को जेसे श्री भिषय जतावतें
 सो रिजा न। कोहे। चापल्य मृत कर सब भक्त को रक्षा पूरन करे। चौथा
 को यह भावतें। जो अरुणा नाम अरुण कोहे। जो श्री ठाकुर जी भक्त के
 अधराभूत रस को पान अति अरुण सीत काये। जो लो कवेद मपीरा
 श्री अति श्रोत से रस रूप सब भक्त को कोये। तो श्री ठाकुर जी के नेत्र अंगार
 रस रूप भावात्प करे। श्री नेत्र जो अरुण पंगे। सो श्री ठाकुर जी भक्त
 के विवेक धीर राज अपने नेत्र में राखे। नो ब्रज भक्त श्री ठाकुर जी वस हो
 जेहें। श्री ठाकुर जी के नेत्र को कमल को उपादीये। तो पान जो कमल
 सहा जल में रहतें। सो कमल को यह भावतें। जो जल के वदेत अपर वदे

॥ मधु ॥ नैसं श्रीठाकुर केन उह रस ते भरेते ॥ श्रीमोहन वसी करन इत्यादि लक्षणों के भेद
॥ १६ ॥ ताते श्रीठाकुर जी जब करन सार सारवत ॥ या प्रकार नेत्र में अनेक भावते ॥ ता
 रोते श्रीआचार्य जी महा प्रभु नेत्र में मंदिर सन करते ॥ श्रीरहा रू सन मधुर
 परस्पर ब्रज भक्तन के संग निजुन मंदिर विवेकें स्त सीर स्तना लीजेत ॥ प्रभा
 ने दीवियें आसक्त होय ॥ अनांद में ही सहेसि के सोरस मुख्य वरानिहें ॥ श्रीरहा
 आचार्य जी जब श्रीनाथ जी को धंगार करत ॥ तब श्रीनाथ जी ही सहेसि
 के साती करत ॥ श्रीठाकुर जी विषय हसन अनेक भावते ॥ कोहते जब आप
 गो चारण को पधारत ॥ तब सखान सोदास हेसि के वारी करत ॥ ताके मीसो
 भक्तन को अनेक चचन करत ॥ श्रीठाकुर जी हसके अपने ऐश्वर्य को
 पधारवत ॥ कोहते ॥ अपने ऐश्वर्य को तिरछा न करे ॥ तो ब्रज भक्तन सो या
 नादिक लीलान होय ॥ कोहते मधुरस में श्रीरहस्य रीति धरे ॥ सो हृदय
 तरे ॥ जो जसोदा जी को जा समें उरव में बिलोक श्रीठाकुर जी रखाये ॥ तब श्री
 जसोदा जी को भ्रम भयो ॥ जो यह कदा ॥ तब श्रीठाकुर जी ने विचार को पो ॥ जो
 न को ईश्वर्य भाव प्रगट होय ॥ तो यह वात्सल्य रस जापगे ॥ जो मेस्को बालक
 जान अत्यंत स्नेह करत ॥ जहां ऐश्वर्य जान ॥ तहां तो जे से देवता स्तुत काते
 तोता प्रकार होय ॥ ताते हेसके श्रीपसोदा जी बोले ॥ तब श्रीयसोदा जी यज्ञान
 जो यह तो बालक ॥ नेही को भ्रम ॥ नैसही हसके ब्रज भक्तन के मन रेरे
 ताते ब्रज भक्तन यह जानत ॥ जो परम सोदर रूप नंद कुमार ॥ तमोरपामपी
 तमरे ॥ सेसं जान के मधुर रस को आचरण करत ॥ श्रीठाकुर जी मधुर
 रस के वीच ऐश्वर्य करत ॥ जगावते सकट दीपति ॥ अग्निपान को ये सेसं श्री
 अकर पाछें मंदिर के सवन के मन मोहत ॥ जो मधुर रस को सुवन जाय ता
 ने श्रीठाकुर जी को हसनो ॥ सो मधुर रस को पोधारत ॥ ताते श्रीआचार्य जी कहत ॥
 हसनं अधर मधुर ॥ अवकतत ॥ हृदय मधुर ॥ ताको जय यहते ॥ जो हृदय मधुर ताते
 के ॥ जो अष्टभूत सदा सर्वदा श्रीठाकुर जी के कंठ में चोकी माना तार आदि वि
 राजत ॥ सो हृदय में उरव्य श्रीस्वामिनी जी ॥ तिनहों को भाव सीहन मालाप
 हाये ॥ ताते हृदय मधुर करे ॥ श्रीठाकुर जी को हृदय अत्यंत को मन ॥
 अपने भक्तन की आतिनाही सहै सकत ॥ ओह देवतानि ज स्वाधीन ॥ जो इन

को स्वाध्याय तो पता प्रसन्न होय ॥ नही तो जीव को बुरा करे ॥ नैस श्रीठाकुर जी नाही
 जो श्रीठाकुर जी को सेवा में अपराध पड़े ॥ तो आपस मा करे के रूप करे ॥ मासप
 चाध्याई में ज वज्रंतर ध्यान भये ॥ तब भक्तन ने फ जान्यो ॥ ताहें श्रीठाकुर जी
 भक्तन की रक्षा को ये ॥ कहते गर्भ मन में भयो ॥ जो श्रीठाकुर जी अंतर्ध्यान
 गर्व इन करे ॥ तो इन को रस की प्राप्ति न हो ॥ सो जय अत्यंत दैन्य भाव आपो ॥ जा
 हने दोय भस्म होय गये ॥ तब पुलिन में प्रगट भये ॥ ताछे रास लीला करत ब्रज
 भक्तन के मनो धरन को ये ॥ ताते श्रीठाकुर जी को हृदय अत्यंत को मन ले ॥ ताते
 हृदय मधुर करे ॥ अवकट गमन मधुर ॥ लीला के अनुसार उरव्य अध्याय
 जागमन नाम चलिबे को ॥ सो निजुन मंदिर में श्रीस्वामिनी जी के संग प
 रस्पर गल बारी देके मंद मंद चलत ॥ तब दो उरव्य अनाद पावत ॥ तब स
 खी नाना प्रकार की समिग्री लीये दाडी ॥ तहां निजु को रनिप मन हो ॥ अक
 त सदा सेवन करत ॥ जा समें जा लीला को इच्छा ॥ जापु की इच्छा मंदित का
 लसिद्ध हो रही ॥ अथवा गमन नाम प्रवेस को ॥ कोहते जोान को भक्त
 न के हृदय में प्रवेस को ये ॥ सो ब्रज भक्तन यह नही जानत ॥ जो हमार हृदय में
 श्रीठाकुर जी ॥ कहते ॥ जा समें इन के पास अचूक आपो ॥ श्रीबलेस्व जी स
 हित श्रीठाकुर जी को मधुरा लाये ॥ तब ब्रज भक्तन प्रथम यज्ञान जो श्री
 ठाकुर जी मधुरा पधो ॥ यह जन अत्यंत विरह को ये ॥ तब स्वस्वने कृष्ण में
 हतो ॥ सो ब्रज भक्तन को विरह युक्त देख ॥ प्रगट होय सानु भव काप उनी
 के हृदय में ॥ पा प्रकार ब्रज भक्तन के हृदय में विरह ॥ जभो ब्रज भक्तन
 को देह स्थिर रहे ॥ सो भावात्मक स्वस्व ॥ धार कर के अनुभव कावे पागे
 जहां तार विरह नही ॥ तहां तार संयोग रस की प्राप्ति न हो ॥ सेसं श्रीठाकुर जी
 गोपनीत सो ब्रज में विहा करत ॥ ताते गमन मधुर के ॥ अब अंगे के
 मधुराधिपते रीबल मधुर ॥ या को अध्याय ॥ जो स्वर्ग लोक था पापला
 क श्रीरया पृथ्वी पर जितनी मधुर वलुते ॥ तिन सवन के अधिपति श्रीठाकुर
 जी ॥ यह पद रश्मि के मंद ॥ सो श्रीठाकुर जी समान को री नही ॥ कोहते ॥ जिन
 ने सींगार सते ॥ सच इनने प्रगट ॥ ताते कह मधुराधिपते ॥ अंगे के रीगि
 लं मधुर ॥ या को अध्याय ॥ जो समस्त अंगार इनने प्रगट ॥ अंगे के रीगि

मधु ॥ धर्मप्रथमकालावच्छिन्नसर्वलीलाकरनभंसमर्थतातेसर्वलमधुरं
॥ १६५ ॥ याप्रकारप्रथमश्लोककोअर्थमयो **॥ स्तोका ॥** वचनमधुरं चरितं मधुरं चसनं
 धुरं वलितं मधुरं चलितं मधुरं भूतं मधुरं मधुराधिपतरिखितं मधुरं
॥ याकोअर्थ ॥ अवकरं वचनं मधुरं याकोअर्थकरं देहं जोओआचार्यजीको
 श्रीठाकुरजीनेआज्ञादीयेजोतुमजीवनकोब्रह्मसंवेधकायअंगीकारकोमा
 तिनकेसकलदोसदूरहोगे **॥** यहमधुरवचन **॥** औररासपंचाध्याइमेंआलोत
 जारकेब्रजभक्तनकोबुलायेत **॥** तिनसेऊपरतोकेबारेऔरभीतरमधुर **॥** ऐसे
 चनश्रीठाकुरजीहें **॥** जोतुमअपनेघरजाउ **॥** सोभीतरजोमधुरभावतोकेजानेवै
 ब्रजभक्तनकीयोग्यताहै **॥** कोहेत **॥** ऊपरकहिये **॥** जोऐसेश्रीठाकुरजीकेकमल
 दयमेंब्रजभक्तनकीस्थितहै **॥** तातेश्रीठाकुरजीकेदृश्यकेअभिप्रायकोमाने
 मर्वादावचननमाने **॥** ताछेश्रीठाकुरजीयहविचारे **॥** जोमेरीआज्ञानअने
 कोहेतआपमुगलीवजाउकेबुलाइत **॥** आपहीऊपरकेबारेवचनकरें **॥** सो
 ब्रजभक्तयाजिन **॥** जोरहकोघरहोपडावेकोआज्ञाहोती **॥** तोबुलावतेको
 कोऐसेजानकेघरनहींगये **॥** तातेवचनमधुरकरे **॥** औरनिकुंजमंदिरमें
 श्रीस्वामिनीजीमानकरतहें **॥** तबश्रीठाकुरजीअलसहितअनेकवचनकर
 तहें **॥** जोअवमेरीअपराधहमाको **॥** अदोयकोदोयलगवतहो **॥** तब
 नमुगलेकेलीयेसरासनमानकारतहें **॥** तातेवचनमधुरकरे **॥** अवचनमधुर
 याकोअर्थयहहै **॥** जबगोदामानतहै **॥** तबश्रीठाकुरजीआपसारीकोभय
 धरकेनानाप्रकारकेचरित्रकरतहें **॥** मानमनावतहें **॥** औरमारवनौचोरी
 लीलामेंसखीनकेघरचोरीकरनजातहें **॥** सोगोपिकापकरकेआपसोदा
 जोघरलेआइ **॥** सोश्रीठाकुरजीगोपिकानसोंकरे **॥** जोयाप्रकारभेरपुत्रों
 निव्यचोरितगावतहो **॥** कोही **॥** तातेदेखितोयहमेरोपुत्रहो **॥** तबबहगोपिका
 देखकेचक्रतहोइरी **॥** औरएकसमेंश्रीठाकुरजीयसोदाजीकेआगनमें
 रिंगनकरतहै **॥** तबअपनोप्रतिबिंबदेखआपपकरनकोदोरे **॥** तहोको
 गोपीजनआपकेश्रीठाकुरजीकोंगोदमेंउठापलेयो **॥** अंधियारेनिकुंज
 मंदिरमेंपधारे **॥** तहोश्रीठाकुरजीसोंविज्ञप्रकीये **॥** जोरमारोमनोर्धसीद्ध
 करनकोप्रगटभयेहो **॥** सोकोरो **॥** औरतुमसर्वसामर्थहो **॥** यहरहकोनिधैं

तबश्रीठाकुरजीप्रसन्नहयकेमनायेपूजाकरतहें **॥** ऐसेनानाप्रकारकेचरित्र
 करभक्तनकोसुखदेतहें **॥** तातेचरितंमधुरंकरे **॥** अववसनंमधुरं **॥** जोअर्थय
 तहै **॥** जोवसननामपदवस्त्व **॥** जोएकसमेंनिजमांदरेमेंबसेहैं **॥** सोअपनोपीता
 वरतोस्वामिनीजीकेपासरहो **॥** औरस्वामिनीजीकोआपकोपासरहो **॥** और
 श्रीस्वामिनीजीकेनोलाव **॥** औरआपपधारतहें **॥** आलससहितअंगजिन
 केहोइरतहें **॥** औरश्रीठाकुरजीकोअंगऐसेमुदरेहैं **॥** जिनकेसंगेवसनहोसो
 भाइतहें **॥** सोअत्यंतमधुरहैं **॥** याहोसखोजनप्रसादीवस्त्वपरतहें **॥** कोहेत
 प्रसादीवस्त्व **॥** श्रीअंगकेसंबंधतेअत्यंतमधुरहैं **॥** कोहेत **॥** श्रीठाकुरजीश्रीसा
 मिनीजीसंगनानाप्रकारकीलीलाकरतहें **॥** तबश्रीअंगकेअनुरागकमुकुम
 अंगजाआदिबंधवस्त्वतेहोतहें **॥** तातेप्रथमस्वरूपसेवातथावस्त्वसेवा
 हउत्पद्ये **॥** जोमंसवरसनकोअनुभवहैं **॥** तोमंजोदासभावश्रीठाकुरजीसो
 खतहें **॥** सोअनप्रसादीवस्त्वनहींपहरे **॥** प्रथमश्रीठाकुरजीकोअंगीकारका
 यपाछेंआपपहरे **॥** तोअस्लोकिकेदेहोय **॥** तबश्रीठाकुरजीकोलीलाअनु
 भवकरबेजोगहोय **॥** तातेदासकोप्रसादीवस्त्वपरहो **॥** औरवस्त्वश्रीठाकुरजी
 केरसकोआवरागकरतहें **॥** ऐसेजबपीतावश्रीठाकुरजीधरतहें **॥** तबश्रीअ
 गकोदसननहींहोत **॥** सोवस्त्वसोंठांयोभीतरसेहो **॥** सोवस्त्वसोमिले
 तातेवसनंमधुरंकरे **॥** अववलितंमधुरं **॥** कोयहअर्थहै **॥** जोआपहीप्रमेय
 बलकरकेब्रजभक्तनकोपुष्टिरेतसोंअंगीकारकोय **॥** ऐसेपूतनाकोमार
 निजभक्तनकीअविद्यादूरकोये **॥** ऐसेसर्वदेव्यनकोमारभक्तनकेदासदूर
 कोये **॥** औरकालीकोदमनमारनहीं **॥** कोहेतभक्तनकोइंद्रीकोदमनकरतय
 नहोहैं **॥** जोइंद्रीनकोमारें **॥** तोरसकोभोगकोकरे **॥** दसनकरनालीलगवनी
 तातेसवऔरतेछुडायअपनीऔरलगोये **॥** सोयेऔरसोंनहोय **॥** एनहीप्र
 मेयवधतेकोय **॥** तैसेहीश्रीआचार्यजीब्रह्मसंवाधकायइहीसबपदधि
 कोदमनकरसेवायोग्यकोये **॥** कोहेतप्रमेयमार्गसोपुष्टिनागे **॥** जोआपही
 भक्तकीजाग्यताकरअंगीकारकरें **॥** तातेवलितंमधुरंकरे **॥** औरश्रीठाकुर
 जीगोपीजनकोप्रमेयवधतेसंकेतहकरतहें **॥** जोगोचाराराखेननमिस
 काके **॥** श्रीनेदरायप्रसादाजीसोंछपके **॥** गोपीजनकोनिकुंजमंदिरमेंपधारतहें

मधु- और निज भक्तन के कार्य करवे में परम चतुर हैं। सादा भक्त की रक्षा करते हैं।
१६६- ते वलिते मधुरं कहे। अवचलिते मधुरं को यह अर्थ है। जो गौ चाने को भाव
 सों सरवान के में उलने में चलते हैं। सो देखे के व्रज भक्त मोहित होते हैं। सो व्रज भक्त
 न सोन हो रसो जात। सो अपने घर न ते मिस के आवतें। न सो सकल मनो धी
 सिद्ध होते हैं। न सो और मधुरं कहिये। मंद में दृष्टि आकुर जी चलते हैं। जव और
 हावन में पधारतें। तहां श्री गोकुल में अनेक गह्वर निकुंज परम सुख मान
 करतें। अनेक पक्षी भाव सों बोलतें। नाना प्रकार के दृष्टि फूल न सो आते
 हैं। अनेक कला धार्य रहते हैं। मकरंद भी सुगंध सहित विविध पवन चढ़ते हैं।
 सो श्री गोकुर जी के मन को मोहतें। काम भाव को पावते हैं। तब श्री गोकुर जी
 दम दमन हो चलते हैं। तहां भाव सों जानने जो अनेक व्रज भक्तन के संग
 मंद में दमन फूल वीन न विधे। निकुंज के पधारन के सिंघे अत्यंत मधुरे।
 नाते चलिते मधुरं कहे। अवभुमतं मधुरं कहे। पाको यह अर्थ है। जो कस
 अश्वमे वसु को देखते हैं। तब श्री गोकुर जी को भ्रम होत है। सो कहतें कि
 जमंदिर में श्री स्वामिनी जी और श्री गोकुर जी विराजतें। सो कहतें से सीध
 को लहर उठते हैं। तब श्री स्वामिनी जी कहतें। श्री ललता श्री गोकुर जी
 हां कूंगे। पर देख श्री गोकुर जी को भ्रम होत है। जो मेरे पितापं में से सीध
 रहते हैं। न्यारे भयंते कहते हैं। और रस दिक् लीला में श्री स्वामिनी जी नि
 त्य करतें। सो देख श्री गोकुर जी चक्र तहो प रहते हैं। जो परगुण में नो
 से से अनेक भक्त श्री गोकुर जी को होतें। सो भ्रम मधुरं कहते हैं। श्री ग
 वुर जी आपसी कशि रोमनतें। सब कती हैं। सो बाल के से अपनी आवा
 सेव के भूलि रहते हैं। ते से ही व्रज भक्तन की छाया सदा संग रहते हैं। सो
 आप व्रज भक्तन को चरित्र देखि वस भये हैं। नाते ध्रुवितं मधुरं कहे। अ
 ने कहे। मधुराधिपते रवे वलं मधुरं। ताको संवोधन जानने। जो इन समान
 के मधुर नरां। सो ऊपर कथो भाव जानने। स्नेह को निरूपन भयो अ
 व कहतें हैं। स्तोत्र। वेणु मधुरं रेणु मधुरं पाणि मधुरं। नन्यं मधुरं सख्यं
 मधुरं। मधुराधिपति रवि वलं मधुरं। २॥ याको अर्थ है। अव कहें वेणु मधुरं
 जव श्री गोकुर जी ललित चमक स्वरूप धारतें। तब वामपरा व्रत देखोय

वेणु में जेच सुर सांगन करतें। सो अत्यंत मधुरे। कहते हैं। ललित चमक जो
 स्वरूप देखे। सो व्रज भक्तन के भोग्य हैं। ते से ही वेणु नाद मधुरे। सो रास पंचा
 धारि को भाव सों जानने। कहते हैं। सरस्वती में वेणु वज्र पते हैं। सो व्रज में कड़े
 न सुन्यो। तब कुमारी का गोपि जानने सुन्यो। सो रास में श्री गोकुर के रास अर्थ
 और सखान संग तथा श्री मंदराप य सोदा जो के अंग वेणु वजावनतें। उनही
 के उखरे नार्थ भेद जानने। इन को उखि मयो दास दिन प्रमदें। ताते इन को से
 होर सभोग करन की योग ताहे। कहते हैं। रास पंचाधारि में जव श्री गोकुर जी वेणु
 वजावतें। तब वेणु नाद सुन गाय चक्र तहो र करी उगड़े के रस पान अवसर
 राकोये। उख में चरन रहि गये। वधरा हृषीकेश के पीबते हैं। श्री यमुना जो सि
 र होर रहो। ब्रह्मन में ते मधु को धारा बरचली। और श्री गोकुर नंद वीर भक्त भये
 सो अनेक ठोर चरन चिन्ह भये पशु पक्षी सब मोहित भये। या प्रकार सब को आ
 नंद भयो। ता में से ही रस को अत्र भवतो भोगो जन को भयो। ता से वेणु नृ
 न कलावतो तान को अलाप चरि में उचीने चील ल उठे हैं। ते सी चरन की
 गीतों को वक्रता हस्त की चंचलताते। व्रज भक्तन हृदय की लाज धीर सवन
 को छोड़ आनंद को अत्र भव भयो। वेणु द्वारा अधरा मृत पान ते भक्त भये। ह
 दय में जो भावा एक ठोर करार रहे हैं। सो वेणु नाद सों प्रगट कोये। जे से स
 उदमध रत्न प्रगट कोये। ते से ही भक्तन को भाव वेणु द्वारा प्रगट कोये। कहते
 हृदय हृषीकेश अधजल के भीतर रहते हैं। यह के नो जानत हैं। सो श्री ग
 वुर जी अवराहारा स्वरूप हो भोतर पधार। उह रत्न प्रगट कोये। तो पर जो व्र
 ज भक्तन को रत्न भावात्मक स्वरूप देखे। ताको भावते श्री गोकुर जी वसते हैं।
 और उपाय श्री गोकुर जी के निस्वको नरां। तो वेणु अत्यंत शीघरे। नाते की
 में श्री हस्त में रघुवतें। कहते हैं। नाते वेणु मधुरं कहे। और वेणु में अति चा
 र्य है। जो भक्ति को सेकत इच्छा के वेणु द्वारा जतावनतें। और को निरुजने
 अव कहें रेणु मधुरं। पाको अर्थ है। जो श्री गोकुर जी के चरणा कमल के रेणु
 हैं। सो सब को चंद्रोयें हैं। सो प्रसिद्ध है। चरणा विंद की रज के अत्र पवि
 ना संबंध विना स्स के प्राप्त न हो। कहते हैं। जव पूतना व्रज में अर्थ। सो १६८
 जाखाल कने के प्राण उभे धोर श्री नंद जी के घर अर्थ। सो श्री गोकुर जी

॥ मधु ॥ तब भक्त ने न देवे सो अत्यंत विरह भयो और में लीला करत तइ प्रभु ॥ १६८ ॥
 को अनुभव करे तब गोपीजन तो सर्व प्रथम ही समर्पन कर चुके ॥ तो ते सार
 मिव होइ परस्पर श्री ठाकुर जी और भक्त न में हो ॥ ऐसे और कहें नारों ॥ तो ते सार
 मधुर करे ॥ पाछे मधुराधिपत रविल मधुर ॥ सो पहले कहि आये ॥ अब और कहें
॥ श्रीक ॥ गोते मधुर पीत मधुर उक्त मधुर सुत मधुर ॥ रूप मधुर तिलक मधुर मधुर
 राधे पीत रविल मधुर ॥ **॥ पायाको अर्थ ॥** अवगीत मधुर ॥ जो श्री ठाकुर जी मान
 तहें ॥ सो तो मधुर ॥ सतु क कह्यो स्वामिनी जो संग गान करत ॥ सो अति मधुर
 कोरते ॥ जवरास पंचाध्याई में छली वजाइ गान कीये ॥ तब चलो को मति न भो
 पाछे जव सो स्वामिनी जे गान कीये ॥ सो सुन श्री ठाकुर जी चकत होइ ॥ सो स
 निज अंतरंग सरचरी के अनुभव के याग्य ॥ ताते गोते मधुर करे ॥ अब पीत मधुर
 जो यामे अने क भाव ॥ जो सुख्य तो श्री स्वामिनी जी के अधरा नृत पानि न
 क कह भावत नारों ॥ सन संग नौतन पीत प्रगट होत ॥ या प्रकार कोटि कंठि नो
 तेन ॥ ऐसे स्वरूप भाव ते अनुभव करे ॥ और पीत न जो दावाग्नि को पान के
 सो भक्तन कीरसा कीये ॥ और द्वादिक पान कर के सपान कीये ॥ ताते श्री ठाकुर
 भक्तन के मुख दे नार्थ हो लीला करत ॥ ताते पीत मधुर ॥ अब भुक्त मधुर
 जो सर्व भोक्ता श्री कृष्ण आप ॥ और ब्रज भक्त न के भाव रूप के भोक्ता
 प ॥ कैसे जैसे मर सार या हो ॥ जैसे उष्टि में मकरंद रूप ॥ ताको पान
 करत ॥ तेसे श्री ठाकुर जी संयोग और विप्रयोग होइ स्वरूप को पान कीये ॥ और
 ब्रज भक्तन की भावरीत सो जो सेवा ताह को पान कीये ॥ ताते भुक्त मधुर करे
 अब सुत मधुर ॥ जो अपने जन श्री स्वामिनी जी तिन के लाज धीरज विर
 सव ॥ पाछे सब कोर सामें न तर भये ॥ कोरते ॥ उन में चैतन्य तारूप मन हो
 तिन को तो आप लीये ॥ पाछे आप रसा कीये ॥ पाछे आप करे ॥ श्री कृष्ण नाम
 सत्कृत ॥ जो आप हो भावरूप फल देव को पाव संपादन कोय ॥ और वियोगात्मक
 भाव रूप आप दीये तब भयो कोरते ॥ सो जो व को विष्टे अने क काल भयो अब
 केसे मिलें ॥ तब विप्रयोगात्मक भाव प्रगट होय ॥ जव अंगीकार करनो विचारे
 तब ही विरह होय ॥ सो ब्रज भक्तन को विरह सन कोय ॥ और पुष्टि मार्ग के साधन
 दीये ॥ ताते सब सब दोर श्री ठाकुर जी को जाने ॥ या प्रकार सब भक्तन की सा

में न स्मरत ॥ ताते सुत मधुर करे ॥ **॥ अव रूप मधुर ॥** जो लीला तत्र भंग स्वरूप पाम
 र रूप ॥ सो बहादिक अगम्य स्वन च वेदानीत स्वरूप को वर्णन करत ॥ वेद को
 अधिका अंगार सत्त्व कलीलो में नारों ॥ ताते स्तनो करत ॥ का पाद मुखादिक
 उरुवान मसार महार रूप ॥ और पर स्वरूप स्त्री भो भाव का के योग का दे योगे
 कोरते ॥ अग्नि कुमार का कापि नो भाव भये ॥ और ब्रज मेजे को मनी भाव तेन ॥ ते
 न ही को या स्वरूप को अनुभव भयो ॥ ताते रूप मधुर करे ॥ अब तिलक मधुर ॥ त
 लक जोहें ॥ सो सर्व सो भा मुखा विंद को ॥ ताको रत्न के इकठोर कोये ॥ सो श्री
 स्वामिनी जी के सर के तिल कीये ॥ जो पुष्टि न लगे ॥ और दुष्टि प्रिया प्रिया मुनी
 आपल गावत ॥ कस्तुरी को तिलक ॥ कबहुं कुमकुम को धारत ॥ ताते अति ह
 अग्नि कुमार का और जो ब्रज भक्त ॥ तिन को अनुग रूप आरत वारा ताभा
 वते कुमकुम को तिलक करत ॥ ऐसे ब्रज भक्त न को ज्ञात ॥ जो नुम मेरे अ
 अयली पोये ॥ ताते में नुम को या भांति गारवत ॥ ताते तिल मधुर रूप ॥ तो
 तिलक मधुर करे ॥ अब मधुराधिपत रविल मधुर ॥ जो रसमान और सत्कृत
 सो ऊपर कहि आये ॥ अब और कहें ॥ **॥ श्रीक ॥** कारा मधुरंतरा मधुरांतरा मधुर
 तरा मधुर ॥ समंत मधुर विमंत मधुर ॥ मधुराधिपत रविल मधुर ॥ **॥ पायाको अर्थ ॥**
 अब करत मधुर ॥ जो श्री ठाकुर जी के मकरा कृत कुंडल सहित जो करत ॥ ताते
 सारथ योग उक्त को अभिनिवेस ॥ करीने उक्ति प्रगट मरते ॥ जो कुरल को
 आंत कोट रूप को सोभा ॥ ताको अनुभव ब्रज भक्त करत ॥ और कुल को
 सारथ योग के ॥ ताको भाव यर ॥ जो ज्ञाने की उक्ति ॥ और भक्तन को भक्ति
 वरे ॥ अनंद भाव का पाद मुख दशा ॥ कोरते जो एक अंग प्रति सब अंग ॥
 तेसे करी को त सवरी ॥ ताते जो भक्त मकरा कृत कुंडल सहित करी को आ
 अय करत ॥ और जो सिद्धन करत ॥ तो मधुर मद कोर कोरते ॥ कोरते उक्ति में
 रस नारों ॥ भक्ति मेर सता को नाम मधुर ॥ सो उक्ति में श्री कृष्ण को स्वरूप न
 नारों ॥ जानी को भावना ते उक्ति देत ॥ ताते करण मधुर करे ॥ श्री स्वामिनी
 जी के हृदय में भाव ॥ एक योगात्मक ॥ विप्रयोगात्मक ताके भोक्ता श्री कृ
 स्न ॥ ऐसे करी हरा होय हृदय में जाय ॥ सो रूप को सो मा देख कापि का
 गरे ॥ ऐसे कुंडल सहित करी अत्यंत सो भा देत ॥ तो कारा मधुर करे

॥ मधु ॥ अवकहे तरंग मधुर ॥ जो सुरति सींध में तरतहे ॥ तरुणा तो श्री बापुर जी
॥ १६४ ॥ और ब्रज सुदोह तरुण हैं ॥ सोने कुंज मंदिर में विहार करत हैं ॥ जैसे मन
 स्तो करणी संग विहार करत हैं ॥ सो परस्पर तरंग न हो मानत ॥ और धुंधित मत्त
 अपा सरया त संबंध कर के ॥ जैसे मोन जल में मन करे ॥ नैसे स्वामिनी जो स
 हित मन करत हैं ॥ ताते तरंग मधुर करे ॥ अवकहे तरंग मधुर ॥ जो रत्नित
 भंग स्वरूप है ॥ देख के श्री स्वामिनी जो लाज विवेक धीर ज सव रह जात है
 और कद पवीर कर भस्म होत है ॥ और स्वामिनी जो के दुर रहती हैं ॥ और व
 हन कुमारिका के कर निराव्रत नापा के दूर कर रसदान की ॥ तिन के सबे ना
 निदोये ॥ ताते तरंग मधुर करे ॥ अवतरंग मधुर ॥ जो अने कनि कुंज न में
 ज भक्त न संग मन करत हैं ॥ कलि दो दुता पास्त मनु चंति पशु अज्ञा गोप
 कन्या ॥ यत्न रहमान पुरान में अति न को दही न भयो ॥ पाछे जब ब्रज विषे ला
 ला संबंध भयो ॥ तहां निवृज न्यार न्यार रहें ॥ तहां शकल में सवन सो विहार करत
 और जब दो उस्वरूप कलि में लीन होय जायें ॥ जैसे मत्त हस्ती तरंगी संकर
 करे ॥ न भिर्युत ॥ अमम पोदि नु भंग संग धृष्ट स्वज ॥ स्वके ज कुं कु मरं जि माप
 गंधर्व्याली भर्तु दुत ॥ अविशद्वा अंतो ग जा भिर भरा विवि भिन्न सनु ॥ ऐसे
 अमर्षा दारित सो मन करत हैं ॥ ताते तरंग मधुर करे ॥ अवविभित मधुर
 जय श्री बाकुर जी मायन चोखे को गोपिका न के घर जात हैं ॥ तब किं का
 गद सुन गोपो पकर को आवत हैं ॥ तब दूध के कुरल जात हैं ॥ तब गोपिका
 ने के उखने च में दूध भा जात है ॥ तब गोपी मग्न हो पठा डी रह जाय ॥ तब अप
 योग भाग जात है ॥ तबाने कुंज में श्री स्वामिनी जो संग विहार करत हैं ॥ और
 रजव दो उस्वरूप में लीन होय ॥ और श्री स्वामिनी जो तो सर्व सम न कीपे ॥ ता
 ते नाना प्रकार की सामि ग्री सिध करार करत हैं ॥ सो परस्पर स्नेहते ॥ ताते दो
 स्वरूप को एक ही जानने ॥ सो दोऊ ने के अरेगे पाछे जो वचे ॥ ता के विमंत म
 धुर कहिये ॥ सो सखी जन के भागार्थ हैं ॥ ताते उष्टि मार्ग की रेत ते भाग धरत हैं
 तहां दोऊ स्वरूप आरोहते ॥ सो महा प्रसाद तेर सा नु भवत है ॥ ताते विमंत मधुर
 अवसमित मधुर ॥ जो श्री बाकुर जी की सव ऊपर करुणा इष्टि सप्त दृष्टि के
 ईमान अपना न करे ॥ पर श्री बाकुर जी सर्व पर रूपारी करत हैं ॥ कोरे ॥ रतना

स्तन विषे विषल गाइ के अरे ॥ सो साहो को माता की गति कीनी ॥ और रं रं उर
 च गा के ॥ पर सर्व दोष समा को ॥ ताते समित मधुर करे ॥ और ब्रज भक्त को
 जै सो भाव हो ॥ ता को मनो धीर मन कीये ॥ अव मधुरा धि पने रिये लन धुरे पाको
 अर्थ ऊपर कहि आपे ॥ ५ ॥ अव और करत हैं ॥ ~~का~~ क उंजा मधुरा माला मधुरा य
 उना मधुरा बीची मधुरा ॥ सलित मधुर क मने मधुर ॥ त पुरी धा पोने रिये लन धुरे
याको अर्थ ॥ अव उंजा मधुरा ॥ जो पर भक्तन के स्वरूप तत्त्व पदार्थ हैं ॥ ताते श्री
 बाकुर जी को अंत्यंत प्रिये ॥ ताते अपने कंठ में राखत हैं ॥ सो गुंजा में अछा दो
 सत है ॥ सो श्री स्वामिनी जो को स्नेहते ॥ और अरु ता के ने चस्याम ता है ॥ सो तु
 प्रिया को भाव है ॥ और स्वत उंजा श्री चंद्रावली जो और ब्रज भक्तन को भाव है ॥ ताते
 उंजा मधुरा करे ॥ अव माला मधुरा ॥ जो वैजंती माला जो ब्रज में कोटान कोट
 भक्त हैं ॥ तिन के भाव को अंगीकार ॥ ता न प्रकार के पुष कोट ब्रज भक्तन के पृथ
 सां अने क कथा कर ॥ वृं लं वाप मान चान कमल में श्री वं नारि ॥ जो भक्त को जा
 अंग में अंगीकारे ॥ सो ज नावत हैं ॥ ता के मध्य माली माली को माला चो को
 श्री वं सला छन को स्तन श्री कंठ ये उरव्य भक्त ॥ सरोपनि मध्य में श्री स्वामिनी
 जो अदि चतुर्थ पृथ सवन को भाव जानने ॥ ताते माला मधुरा करे ॥ अव य
 उना मधुरा करे ॥ जो श्री पमुना जी तो अति मधुर हैं ॥ स्व लीला श्री पमुना जी
 के निकट होत हैं ॥ और सदा श्री पमुना जी संग विहार करत हैं ॥ और अग्नि मुभा
 र कान को संबंध नु मही कर के भयो ॥ ताते जो कोई तु मगो आश्रय करे ॥ तिन
 को अलौकिक देहा सिध करत है ॥ और रास धोला ब्रज भक्तन संग करत हैं ॥ तब
 रस को अंग में प्रसेद होत है ॥ सो रस श्री पमुना जी में है ॥ और श्री पमुना श्री बाकुर
 र जो और ब्रज भक्तन की लीला अनुकूल है ॥ नाना प्रकार के संकेत करत हैं ॥
 ताते श्री हृस्म को और ब्रज भक्तन को अंत्यंत प्रिये ॥ ताते पमुना मधुरा करे
 अवधीची मधुरा करे ॥ श्री पमुना जी में तरंग प्रभा उठत है ॥ सो मानो श्री पमुना
 जी के हस्त कमल में हैं ॥ जैसे ब्रज में कोटान कोटन ॥ ताते श्री पमुना
 जी को रंग रूप उजाह के दानि कोटि प्रगट करे ॥ ब्रज भक्तन सां श्री बाकुर
 जी संबंध करत हैं ॥ ताते जो श्री पमुना जी की तरंग उठत हैं ॥ सो अने क
 भक्तन के मन को हरत हैं ॥ ताते परत ज नावत हैं ॥ जो तुम रा आरंभ को

मधु॥ तोरसको धनु भवतेय॥ याभातिउष्टे मागीकों लीलासं वंधं करवतरे॥ तातेय
॥१००॥ चानधुराकरे॥ अवसलिलं मधुरं॥ जोनु सारे जल में नाना प्रकार के भ्रम भर पारते
 साक्षात बुल इव भ्रम जल महारस को धारते॥ ताते सलिलं मधुरं करे॥ अवसलिल
 मधुर॥ जो श्रीयमुनाजी में नाना प्रकार के कमल फूल रहेते॥ तिनमें भ्रमर सपात
 करते॥ जैसे अनक भक्तन के भाव को श्रीकृष्ण पान करके सर्वे छा पूरत है॥ और
 यर श्रीपुनाजी को जनावत है॥ ना प्रकार में ब्रज भक्तन को रारवत है॥ नदो के
 श्रीपुनाजी के संग सदा विहार करते॥ और कमल में श्रीलक्ष्मी जी को वासते॥
 तामें परसचन करते॥ जो लक्ष्मी और नारायण श्रीपुनाजी के लट पार और पें
 कोरते॥ श्रीस्वामिनी जी और श्रीकृष्ण यमुनाजी में जो निकुंज मंदिर है॥ तहां सदा वि
 हार करत है॥ सो कमल जो लक्ष्मी तिन के संग भ्रमर आया॥ श्रीकृष्ण को श्रीयमुना
 जो लुत करत है॥ श्रीयमुना जो ज्य पवि हो॥ तहां नाना प्रकार को कपोद नोहे सो
 को दान को दिसर चरी है॥ और देवता पुष्प सुगंध वधी बत है॥ तिरा कोरस श्रीकृष्ण
 इस और भक्तन के श्रीअंग के प्रसद तिन में अंग जा कुमुद सरित॥ श्रीपुनाजी
 में है॥ सो सव और भक्तन के रोय॥ श्रीपुनाजी में व्याघ्र हो रहे है॥ तहां भ्रमर उजोर
 करत है॥ और भक्तन करत है॥ सो नानो परम उत्साह हो रह्यो है॥ पक्षी जमुना
 में जो पदार्थ है सो सव श्रीकृष्ण के संबंधी है॥ ऐसी श्रीपुनाजी विना कबहू सिध
 न होय॥ लक्ष्मी को आश्रय कीये है॥ ताते कमलं मधुरं करे॥ अवमधुराधिपति
 एखिलं मधुरं पाको अर्थ उपाकर है॥ अव और करत है॥ **साकापी** श्रीमधुरापी
 लानधुरा उक्तं मधुरं नुक्तं मधुरं द्रष्टुं मधुरं च द्रष्टुं मधुरं॥ तथुगोपेन एखिलं मधुरं
याको अर्थ॥ अवगोपी मधुराकर है॥ सब भक्तन को मुकट मणि गोपीजन है श्री
 ठाकुर जी को गोपी अति प्री पते॥ और एक क्षण हूं जुहा नही तोत॥ और ब्रज भक्तन
 बुंज में श्रीस्वामिनी जी को श्रीठाकुर जी को अनेक संकेत करत है॥ नहां विहार ली
 ला करत है॥ नहां गोपीजन श्रीठाकुर जी को जस कीये॥ तब स्वामिनी जी कहै॥ जोह
 प्राण प्रिय तुम अति सुंदर है॥ ताते सुरतांतर मरी में मेरो अंगार भयो है॥ सो अव
 में कैसे करूं॥ मोको सधी देखंगी॥ तब श्रीठाकुर जी अपने हस्त कमल तो श्री
 स्वामिनी जी को अंगार करन लागे॥ सो उय को सोभा देख अचन जानत है॥ तब
 स्वामिनी जी कर वेग को मेरो सधी आवत होइंगी तब श्रीठाकुर जी अंगार कोय

पक्षं सधी आरि॥ श्रीस्वामिनी जी को अंगार देर सतेन न में करत है॥ अपनी सन
 सो जो पर अंगार मेरो संध को न होत है॥ याभाति संकेत अंगार न दपावत॥ और पर
 स्वल्प श्रीठाकुर जी के श्रीगोपीजन के अनुभव योगे॥ तोत गोपी मधुराकरे॥ अ
 वलीला मधुराकरे॥ जो लीला रास नमते कोये॥ ब्रज मधुराक्षो में लीला को
 पाछे अंतर्धान लीला दिखोये॥ तामें गोपी जग को लीला को मधुरास करत है
 वेद सास्त्र को अंगम्य मर्यादा रहत॥ अमर्याद सो नत गज रज को नाई सुते सेज
 विषे का कला को सव चतुरे जा को छया ते प्रगट भयो है॥ सो जो लोह द्रव का दान को
 र कामीन मोहत भये॥ ताते सव लीला में अंगार निकुंज लीला मुख है॥ तस्मि
 लामधुराकरा॥ अवपुक्तं मधुरं करे॥ जो कारागार काय तेते है॥ कारागारो पु
 छि उर्वेत न ताता पुछि लीला प्रगट कोये॥ जो लोह लोह सो सव भक्तन॥ मारव न
 जोर लीला में मरजताये॥ जो गोपीजन को सामिग्री अंगो गेते॥ ताते उनको मन अ
 पने में लंगार व्यसनी अवस्था सिध कोये॥ ताते पुक्तं मधुरं करे॥ अवपुक्तं मधुरं
 पंचाधरि में श्रीशुके देव जी सो राजा परिक्षने ने प्रस्म को परो॥ जो रन गोपीन का
 मभाव करके भजने मुक्ति पारि सो को॥ तब श्रीशुके देव जी करे॥ जो रन को सो मु
 क्तिकाह को नही भरी॥ कहै ते शिष्टपाल जन्म ते श्रीकृष्ण को मिदा कीनी तोह
 मुक्ति भरी॥ और गोपीजन तो सर्व सर्मपन कोये॥ ताते प्रीति उर्वेत न के स्वरुपा
 नंद को अनुभव भयो ऐसी मुक्ति भरी॥ श्रीभागवत में कोये॥ मुक्ति नाम वाको
 जो पीछे दुख जे कष्ट न होय॥ सुख को पीछे काट्यो जो कोर साधन ते सिध न
 होय॥ ताते गोपीजन को रस मुक्ति भरी॥ ताते उक्तं मधुरं करे॥ अवदृष्टं मधुरं करे
 जहय नाम कदास सो ब्रज भक्तन लीला भाति सो च्छान न है॥ कहै ते॥ श्रीगुरुजी
 को अंग व्रज भक्तन सो मिलत है॥ तब सीत लताये॥ और साके अंतरा में
 विरह कर धारो जाय॥ तब उय माधो माधो रत है॥ जो कबहू अपने को ब्रज
 जाना धारा धा उकारत है॥ और श्रीकृष्ण बिकल रोय अपने को राधा जान कृष्ण
 कृष्ण उकारत है॥ परह सो देव सखीन को धीर जहूत है॥ जो रन को के संसारी
 से हृष्य बे संसारी॥ ताते द्रष्टुं मधुरं करे॥ अवदृष्टं मधुरं करे॥ अंगार सको
 सव सामिग्री मधुर है॥ श्रीवलदेव जी को संबंध उह लीला में नही॥ कहै ते
 निकुंज मंदिर में पशु पक्षी दुख वली चंद्रमा जितनी सामिग्री है॥ सो सब ते
 अंगार है॥ नहां सव पक्षी है॥ सो उन ही के कावे जगते॥ ताते उनको आश्रय विना

॥ मधु ॥ और के अनुभव में न आवे। ताते पर स्वरि स्थित नारी जाननी। ताते स्वरि मधुरा
॥ २०५ ॥ अवमधुरा धिपेत रखिते मधुरा। याको भाव ऊपर करे। अथ और कहते हैं। **॥**
 जो पा मधुरा गावो मधुरा यष्टि मधुरा अष्टि मधुरा दलित मधुरा फलित मधुरा
 मधुरा धिपेत रखिते मधुरा **॥ याको अर्थ ॥** अवगोपा मधुरा करे। जो अंगार
 में स्वयं सखी नको वलीन को पड़े। और गोपा स यको नासिके। तो कितने
 रंगी भक्त हों। सो या प्रकार जानने। जैसे श्री ठाकुर जी गोचार न को पधारें।
 वज्र भक्त वन की लीला को अनुभव घर में कोये। या प्रकार गोपी अनुभव का
 तहें और गत को निकुंज में द्वार में पधारतें। तब अंतरंगी सखा निकुंज की
 लाको अनुभव घर में करतें। ताते सरवाह उर से के अनुभव पोते। ताते गोपा
 मधुरा करे। अव कहें गावो मधुरा। जो श्री स्वामिनी जी अपने गान को के श्री
 कुर जी को विले कैसे तसो तले। तिन को सो तल करतें। जैसे अग्नि ने वन
 क सपुत्र जाले। तब अष्ट त वर्षा पप्रफुल्लित करतें। जैसे श्री स्वामिनी जी
 करतें। ताते गावो मधुरा करे। अव पीछे मधुरा करे। जो पीछे लकुटी का ना
 हें सो अति मधुरे कैसे श्री ठाकुर जी हम न मंगरवतें। दा ना किलो लामे त
 मावन की मट की छी के ने पट के लेल कुटते। जो श्री ठाकुर जी तो श्री स्वामिनी
 जी पे आसक्ति हें सो लकुटी ले यह अभिप्राय जतावतें। जो मेनु मंगर साका
 नहों। और गान को लकुटी ते घेतें। ताते पीछे मधुरा करे। अव स्वरि मधुरा
 जो अष्टि मधुरा मंगले। मरजे और सो में जो जी वेदें। सो सब भगवद सं वंधी हें।
 में भेद हें। कोहते। वज्र में के सांष्ट्री ठाकुर जी सो वेर करने। सो इन को स्व
 पानंद को अनुभव नारें। हृदय में दुष्ट भाव भसी। एक श्री ठाकुर जी में सब
 व को पड़े। ना ना पना दिनकारी जो हें। सो सब को त्याग कोये। श्री ठाकुर जी के स
 न्युव भर। कोहते वज्र में अने क स्थिति हें। जिन को जैसे अधकार तें सो नि
 से निरोध लखने में श्री आचार्य जी कहते। नंदय से दा और खहुंगा पी जन को
 विरोध बालि जन के भयो। ताते परमार भाव को प्रणी करे। या भाव तो न
 भयो। सो गुरु सकोर भ सो अनुभव कराय निरोध कोये। या प्रकार न्यारो न्यो
 अष्टि जानने। ताते अष्ट मधुरा करे। अव दलित मधुरा करे। जो हिंदू लामक
 स्वरूप परमार सारें। कोहते प्रथम दलित श्री ठाकुर जी तिन को जबरम
 की रखा भई। सो वासे में हमो बल विप्रयोग लामक प्रगट भयो। सो स्वरूप पर

नम के समान नहों। महार स रूप स्वरूप। कोहते स्वरूप विना अंगार स सोभा
 न दे। ताते सयो गदल श्री ठाकुर जी। प्रो विप्रयोग दल श्री स्वामिनी जी आ
 दि वृंदावन में स रूप भूषित तहां स स्वीन कुंज सिधका तले। कहना ना प्रकार के
 उख वृक्षान कुंज तहां पक्षी वोरतें। पर म सो भाषा न न गत। ताके बोच के लि
 सि ज्वा ताके और और पूजा तयां पें प्रमाण तहें। सो स्त्री भाव को पाये। और
 निकुंज में पशु पक्षी सब स्त्री रूप रूप जानने। सो निकुंज ताके आपास अंध क
 द्वं वरपी पस्त्रादि जिन को देव मोहित होतें। कोहते वृक्ष को भगवत्
 बंध कर देव को अधिकार नहों। रे स रूप वृक्ष तें। तिन के उपर लता छा रही हें
 नहां स्वामिनी संग श्री ठाकुर जी विहार करतें। ताते मधुरा को मधुरे सो गत
 मानो संग्राम में देवी उह का तहें। अथ वा नृप सारित भगत जगज्ज को निरकार
 करतें। तब कुंज को के वंदन हें। और माला दूत हें। अंगार अल विलि विपरीत
 रमराखिये कोरु काम देव के मद को मद नहो तहें। ताते दलित मधुरा करे। अव फलि
 त मधुरा करे। पर स्वरूप अनुभव जाको भयो गोपा सोर जो नो गो। सो श्री ठाकुर जी
 श्री आचार्य जी सो बिना प्रकरतें। जो मय रस के ये मय नहो तहें। पर आपने नि
 वेदन काये के यह जो। नुहो रस वे स्वध नहो। सो मो को फलित कोये। सो पर आ
 पके उय द्वा फलित भयो। तें मेरी जो भे भक्त हें। तिन को नुहो चरता में दू भा
 बहे तिन को फलित होउ। कोहते जो आप प्रगट नहो तहें। तो पर ने वेदन श्री ठाकुर
 मार्ग को फल नहो तहें। रे से श्री ठाकुर जी स्वामिनी जी। मधुर लीला के सति सब का
 ल में सर्व लीला करन को समर्थ हें। और सयोगात्मक और विप्रयोगात्मक ह
 से नि साधन को अपने जान के दान दीये। तातह मता अपके चरन ज को नमस्कार
 करतें। या प्रकार श्री ठाकुर जी विजो प्रकर। अपने अंगीकृत जी वन को सिधाय
 जो पा प्रकार दूट आ अप करेगे। तब फल मिलेगे। और श्री ठाकुर जी तो दो को भ
 वरुन विस्तार सो लिखे हें। सो में अपने बुध अनुसारन के प्रवाधये। तही में
 ते कछ क भाव श्री ठाकुर जी श्री विद्वल नाथ जी क चण क मलेक आश्रित दो स
 इति श्री मधुरा क सटीक भावों में संपूर्ण ॥ अथ गो कुला दू सव्य कलि बेत
 तहो प्रथम श्री ठाकुर जी श्री आचार्य जी को नमस्कार करतें। **॥** नमो आ
 चार्य सर्व स्वं लीला दू दय परितः। नमः श्री विद्वल नृपुः चरने रणु मतानि धिः
॥ याको अर्थ ॥ अव श्री ठाकुर जी कहते हैं। जो हे श्री आचार्य जी में नुहो चरन

गोकुल ॥ कमल को मे वारं वार नमस्कार करत हं ॥ श्री श्री आचार्य जी उने के सेते ॥ तुम्हारे
 २०३ ॥ इय श्री ठाकुर जी की लीला रस रूप स सु सु सो भीर खोते ॥ सो अचल रस रूप पान क
 रे वे जल प वे श सों इ जी प्रगट भये ते ॥ सो आप जे से श्री आचार्य जी से व क न को स
 को ये ते से आप कर ते ॥ ऐसे परम रूप पाल श्री ठाकुर जी ॥ तिन के चारन कमल को
 मे नमस्कार करत हं ॥ पासी आश्रय ते गोकुल दूक की टीका करत हं ॥ कोरे ते यो
 श्री गोकुल संवो श्री ठाकुर जी के नाम हं ॥ सो न्यो न्यो करत हं ॥ **श्लोक** ॥ श्री म
 कुल सर्व स्व श्री मद्रोकुल मंडन ॥ श्री मद्रोकुल इकतारा श्री मद्रोकुल जीवन
या को अर्थ ॥ अव प्रथम श्री मद्रोकुल सर्व स्व ॥ जो श्री गोकुल जो ॥ धोर तन को
 र्व स्व श्री ठाकुर जी ॥ ता हो ते या ना म में श्री सकेत जानने ॥ गोकुल श्री गोकुल
 य गोकुल धी शादि ॥ श्री ठाकुर जी को गाय वदुत प्रीय ॥ ताते श्री गोकुल श्री
 प्रीय ॥ श्री रस ध्या से मे जव गौ चारन को श्री गोकुल आस ते ॥ न वरिषा के मे गो
 दे रहते ॥ तहां ब्रज भक्त गाय डरा वन के मिस आवत हं ॥ ताते श्री गोकुल अयत
 प्रीय ॥ श्री गोकुल के सी ॥ जहां बाल लीला तो प्रसिद्ध ॥ जिन के अंत मे
 किलो र लीला रस लीला ॥ जे से आदि दृष्टा वन मे रस लीला विहार लीला प्रसिद्ध
 तहां बाल लीला ॥ भगवद् गीते ॥ गिरधर लाल पालने हुटने ॥ कोरे ते कत गिर
 धर लाल कहां पालना ॥ ते से पालना मे श्री ठाकुर जी के ते ॥ मान नी मान हं
 श्री य सो दा जी पालना हुला मत हं ॥ ता ही से मे भक्त न को सबे लीला को अनुभव
 जतावत हं ॥ ताते श्री मद्रोकुल सर्व स्व ॥ श्री गोकुल मे य सो दा घाटे ॥ तहां
 बाल लीला प्रसिद्ध ॥ श्री ठाकुर जी घाटे पे दान लीला मुख्य ॥ ता हो ते श्री ठा
 र जी दान लीला दूध पति ॥ ठकुर जी घाटे श्री ठाकुर जी से ध्या करे लीला
 को अनुभव को ॥ सो दान लीला श्री ठाकुर जी आप वरी न को ये ॥ तहां अपनो स
 रूप जताये ॥ मुदा चंद्र बल्य कुसुम सयनी बाहिर चित ॥ यर भाव कर ठकुर
 जी घाटे दान लीला को ठकुर जी ॥ श्री गे विंद घाटे विहार को ठार ॥ ताते श्री आ
 चार्य जी तहां वि आभ करते ॥ से ध्या वेदन करते ॥ ताते रम रा स्थल के ॥ श्री य सो दा
 जी के अंगन मे बाल लीला को ये ॥ श्री ठाकुर जी श्री य मुना अरु पति मे करते ॥
 जो दूधो चा क्लृप्त विहार ॥ जो रा सादि क लीला निव्य विहार होत हं ॥ सो विना
 धिकार अनुभव न होय ॥ ताते श्री गोकुल मे श्री ठाकुर जी सबे लीला करत हं ॥ या
 होत श्री आचार्य जी च व सो की मे करते ॥ गोकुल स्वापादयो स्मरांग भजन च

निप न न्यां न्य मिति मे मति ॥ ताते श्री गोकुल परम रस स्नेह ॥ या हो ते श्री मद्रोकुल
 सर्व स्व ॥ अव श्री मद्रोकुल मंडन ॥ जो मंडन रसा कावे को नाम हं ॥ श्री ठाकुर
 जी श्री गोकुल को रसा करत हं ॥ सो सो श्री भागवत मे प्रसिद्ध ॥ जो दुसुन को मास
 विष्ट दू को ये ॥ श्री रक्षा प्री को ये ॥ अथवा श्री गोकुल भक्त ॥ सो सब को रसा मे त
 त्यर ॥ कोरे ते अनेक व्रज भक्त श्री गोकुल मे रहते ॥ श्री गौर रहते ॥ तिन को रसा
 श्री गोकुल करत हं ॥ ताते श्री मद्रोकुल मंडन के ॥ अव श्री मद्रोकुल इकतारा
 जो श्री गोकुल के नेत्र रूप श्री ठाकुर जी ॥ व श्री ठाकुर जी के नव मे जोर याम नारा
 ता को पुतरी कहत हं ॥ सो बहुत प्रीय होत ॥ पल कर सा करत ॥ ऐसे ही श्री गोकुल
 प्रीय ॥ कोरे ते भगवद् रूप ॥ तहां कोरे करे गोकुल को प्रीय ॥ तहां कहत हं
 जो श्री गोकुल मे श्री स्वामी जी प्रीय लीये विराज त हं ॥ श्री श्री यमुना जी निज
 प्रीय लीये विराज त हं ॥ सो कीर्तन न मे करे हं ॥ श्री गोकुल निज कट वसत हो लहर
 न को छवि अये ॥ ताते सबे लीला श्री यमुना जी सो मिल करत हं ॥ सो जे से नेत्र को
 रसा पल करत हं ॥ ते से रन दो नो स्वरूप न को जानत हं ॥ ताते नेत्र वत हं ॥ ताते श्री
 मद्रोकुल इकतारा के ॥ अव श्री मद्रोकुल जीवन ॥ जो श्री गोकुल के जीवन
 प्राण सुख दायक ॥ श्री भगवत गीता मे के हं ॥ जो जहां मे रहत रहत हं ॥ तहां रहत हं
 ताते श्री गोकुल मे सब भक्तन की चूरा मति व्रज भक्ता ॥ भक्त के जीवन
 श्री ठाकुर जी ॥ श्री ठाकुर जी के जीवन भक्त ॥ ऐसे ४ नाम को अर्थ भयो **श्लोक** ॥
 श्री मद्रोकुल मोत्रे स श्री मद्रोकुल पालक ॥ श्री मद्रोकुल लीला धी श्री मद्रो
 कुल संवय ॥ **या को अर्थ** ॥ अव श्री मद्रोकुल सर्व स्व मात्रे स ॥ जो श्री
 कुल मे आश्रय रूप श्री क्लृप्त हं ॥ तिन के आश्रय सब सव संसार ॥ पाभावे जो
 गोकुल को आश्रय करत हं ॥ तिन को क्लेश न होय ॥ कोरे ते श्री गोकुल मूल
 भूत ॥ जहां श्री ठाकुर जी रस लीला करत हं ॥ ऐसे श्री गोकुल धी श को आ
 श्रय करत ॥ नामे श्री मद्रोकुल मात्रे श के ॥ अव श्री मद्रोकुल पालक श्री ठा
 कुर जी श्री गोकुल के पाल के ॥ अथवा जो श्री गोकुल को आश्रय के
 तिन को पालत हं ॥ उन के मुख ते आप सुख पावत हं ॥ श्री गोकुल भक्त
 सो श्री ठाकुर जी पालन करत हं ॥ श्री ठाकुर जी के लीला नाम मे मनो री होत ॥
 ते से ही फल फूल सामि धी सिध करत हं ॥ श्री सब को रसा करत हं ॥ सो श्री भा

गोकुल ॥ गवतमें करते हैं ॥ नोब्रत्ता स्थिती को कर्ता है ॥ और महादेव सराफ कर्ता है ॥ और **गोकुल**
२०३ ॥ पालन कर्ता है ॥ तैसे ही गोकुल अपने जीव के कोटि अणु धर्मों का पालन करता है ॥ ताने श्रीगोकुल भगवदस्वरूप है ॥ ताने श्रीमद्रोकुल पालक कर्ता है ॥
 अब श्रीमद्रोकुल धीलीलाधी कर्ता है ॥ जो श्रीगोकुल के जालाकती श्रीकृष्ण के
 और और तार में लीला नपीदा सहित कीये ॥ जैसे रसिंध प्रगट होय प्रहलाद के
 रक्षा कीये ॥ और श्रीराम चंद्र प्रगट होय रावनादि दुष्ट मारे देवता न कोर रक्षा को
 और अजुध्यावासीन को मरु मुख होये ॥ और श्रीगोकुल में कृष्ण प्रगट होय
 अमपीदा लीला कीये ॥ ऐसे स्वरूपानंद को अनुभव कराये ॥ ताने श्रीगोकुल
 लने उपरांत और लीला नही ॥ ताने श्रीमद्रोकुल लीलाधी कर्ता है ॥ अब श्रीम
 द्रोकुल संश्रय कर्ता है ॥ जो श्रीगोकुल से को अश्रय कर्ता है ॥ तिन के दुख काम को
 धादिदूर करे ॥ भगवदसंबंध करे ॥ और जहां तदिसं सय ताहां तदिसं सय
 सिनहीं ॥ काहेते श्रीविस्वास आसुरी वे सते ॥ सो असुरों को भगवदसंबंध न होय
 सो श्रीविस्वास के होतही कथि रथा होय जाय ॥ सो भगवद्गीता में कहते हैं ॥
 सय आत्मा विन स्यति ॥ ताने सय श्रीगोकुल में नित्य विहार करत हैं ॥ ता
 ने श्रीमद्रोकुल संश्रय कर्ता है ॥ अब चना मकर ॥ **सोक** ॥ श्रीमद्रोकुल जीवा
 त्मा श्रीमद्रोकुल मानसा ॥ श्रीमद्रोकुल दुखघ्न ॥ श्रीमद्रोकुल विक्षिप्त ॥
 ॥ **श्रीयाको अर्थ** ॥ अब श्रीमद्रोकुल जीवात्मा ॥ सो जैसे इंद्रिय के पति प्राराहें
 तैसे ही तैसे ही श्रीगोकुल के प्रानपति श्रीठाकुर जी हैं ॥ जैसे आत्मा और जी
 व के आश्रयते देह इंद्रिय सहे ॥ जीव सबन के मुखियते ॥ काहेते इंद्रिय नानि
 वीर न होय ॥ और जो वदेइते चारु होय तो इंद्रिय स्थिर हो जाय ॥ सो जीव के
 उखतो परमात्मा में और कहां नाहीं ॥ और जहां जाय ॥ तहां दुख पावे ॥ तैसे
 और जो पृथ्वी पर तो धीरे ॥ सो सब इंद्रिय रूप हैं ॥ तिन सबन के शिरोमन जीव
 त्मा श्रीठाकुर जी ॥ ताने श्रीगोकुल सबते उख्यते ॥ अक्षर को स्वरूप है ॥ जो
 श्रीठाकुर जी विराजत हैं ॥ सो नारद जी ध्रुव से कहते हैं ॥ जो नुम को अति सु
 दर होय बनावन हों ॥ जो श्रीमधुरामंडल में योगे साधन मे सिध होय ॥
 यह श्रीठाकुर जी को धारें ॥ ताभाव सो यहां विराजत हैं ॥ ऐसे विचार श्रीगोकु
 ल में रहते हैं ॥ तिन के श्रीठाकुर जी आप स्व मनोर्थ पूरन करते हैं ॥ ताने श्रीम

द्रोकुल जीवात्मा कहे ॥ अब श्रीमद्रोकुल मानस कर्ता है ॥ जो श्रीठाकुर जी विक्षिप्त
 ते लीला करन को श्रीगोकुल पधारें ॥ सब ब्रजवासी के मानव दायरीये ॥ सो
 श्रीठाकुर जी के संबंध शिव इंद्रादि स्तुत करते हैं ॥ और यहां के वास को रक्षा क
 रते हैं ॥ जो हम ब्रजवासीन भये ॥ और श्रीगोकुल रक्षिके संदेह न करे ॥ जो जीव
 सर्व छोड़ मन श्रीठाकुर जी में लगाये ॥ तिन को रक्षा ठभवाये ॥ काहेते ॥ ज
 हातां दुष्ट अविद्या कर के दुष्ट क्रिया करते हैं ॥ तहां तदिसंबंध नही करत ॥ जो
 प्रभु दुष्ट स्वभाव कव निवर्त के ॥ ऐसे प्रभु से विज्ञात करे ॥ सो श्रीठाकुर जी दु
 ष्ट स्वभाव दुष्ट ॥ लौकिक देह का स्वरूप अनुभव करावत हैं ॥ ताने श्रीमद्रोकु
 ल मानस ॥ अब श्रीमद्रोकुल दुखघ्न ॥ जो श्रीठाकुर जी श्रीगोकुल के स
 र्वदुख हर्ता हैं ॥ तथा जब ब्रजभक्त श्रीठाकुर जी के वीर्य ते प्रकाशते हैं ॥ ऐसे
 दुख मिलने को आप करते हैं ॥ तिन को श्रीगोकुल संयोग करवत है ॥ यथेष्ट
 जाताये ॥ जो विप्रयोग दुख विना संयोग रक्षा की प्राप्ति नाहीं ॥ और श्रीगोकुल जीव
 को संवसिध करत है ॥ ताने श्रीठाकुर जी को श्रीगोकुल अत्यंत प्रीये ॥ ताने श्री
 मद्रोकुल दुखघ्न ॥ अब श्रीमद्रोकुल विक्षिप्त ॥ जो विक्षिप्त नाम रक्षा सो श्रीगो
 कुल को रक्षा श्रीठाकुर जी करत हैं ॥ ऐसे श्रीठाकुर जी तिन को रक्षा श्रीगोकुल को
 काहेते श्रीपसोदा जो पृथ्वी रूप हैं ॥ तिन को भीतर ब्रज संबंध है ॥ सो यमोरा
 जो हूप हो रक्षा करत हैं ॥ सो सर्व मुख छोड़े ॥ श्रीठाकुर जी को मुख विचारत हैं
 यह कहि अंगी कृतभक्त न को जतोय ॥ जो अपने मुख छोड़े ॥ श्रीठाकुर जी को
 मुख विचारने ॥ जाते श्रीठाकुर जी प्रसन्न होय ॥ ताने श्रीमद्रोकुल विक्षिप्त
 अब शरनामन को अर्थ भयो ॥ **सोक** ॥ श्रीमद्रोकुल सौंदर्य श्रीमद्रोकुल सफल
 श्रीमद्रोकुल गोपारा श्रीमद्रोकुल कामद ॥ **श्रीयाको अर्थ** ॥ अब श्रीमद्रोकुल
 सौंदर्य ॥ जो श्रीगोकुल के सो भाभी ठाकुर जी हैं ॥ स्तुत बर पुरारा शास्त्र सब
 करत हैं ॥ और श्रीगोकुल सहज ही में सुंदर हैं ॥ और श्रीपुनाजी और नामा
 प्रकार के रक्ष सहित छलिन तरा श्रीकृष्ण आप भक्तन सहित विराजत हैं
 ताने श्रीआचार्य जी श्रीगोशास्त्री सह गोकुल विराजत हैं ॥ या प्रकार अनु
 भव कर भगवद्गीताये ॥ श्रीगोकुल जुगगुण रक्षा को ॥ ऐसे श्रीआचार्य जी
 श्रीभागवत कीटिका करी ॥ श्रीगोकुल सौंदर्य तत्प्राप्ति करी ॥ ताने श्रीगोकुल की

गोकु ॥ सोभा श्रीठाकुरजीतेह ॥ श्रीठाकुरजी की सोभा श्रीगोकुलनर ॥ साधादास
 ॥ २०४ ॥ जो कालिंदी के तौर नाना प्रकार की लीला करत हैं ॥ ताते श्रीठाकुरजी अन्यतः सो
 भादेत हैं ॥ सो ब्रजभक्त वैसे हैं ॥ जिन की उपमा को जो चुप तो स्त्री को रिनाही सो
 भगवद्गोप्य हैं ॥ सो प्रभृति जे ती जग युवती बाह फेरारो नै रूप पर ॥ सो सी श्री
 मिनी जी संग श्रीठाकुरजी सो भादेत हैं ॥ सो श्रीगोकुल को सो भादिग लक्ष्मी स
 हित नाशयन वैकुण्ठ छोड़ ॥ ब्रज के ब्रह्मन के पानन में व्यापि रहे हैं ॥ देवतान के लो
 क सो भादिग वलजा पावत हैं ॥ श्रीजगदिन ते प्रभूगोकुल में पधार ताहिनेत नै
 नो लो क की सोभा गोकुल में आरही ॥ श्रीलक्ष्मी अपने पति पधार जान अपन
 ताहिनेत स्व कह दाव न भयो ॥ नंदराय जी अपने भंडार लुटायो ॥ फेर जो को स्त्री
 इग्यो ॥ ताते श्रीगोकुल में भूखरा श्रीठाकुरजी ॥ ऐसे सब ब्रजभावाम्म करे ॥ परम
 सुंदर है ॥ ताते श्रीमद्गोकुल सौंदर्य करे ॥ अव श्रीमद्गोकुल सत्फल करे ॥ जो श्री
 गोकुल के पति श्रीकृष्ण हैं ॥ सो सत्फल को दान करत हैं ॥ श्रीर अन्य स्व ताके अ
 ध्यते सत्फल नही होत ॥ ताते जो कोरि स्वर्ग लो क की कामना कर ॥ मरुत प
 होमादि करत हैं ॥ पाछे देवतान के लोक में जाय तो जहां दुख है ॥ सो अन्य श्री
 नभये पाछे फेर ससार में अवतरे ॥ ताते माया के गण नही छूथे ॥ ताते सत्फल
 श्रीगोकुल के आश्रयने श्रीकृष्ण से संबंध होत हैं ॥ जैसे रत्न आगी छिछ
 मार्गी हैं ॥ तीन को श्रीगोकुल के आश्रय श्रीकृष्ण को संबंध कब होय ॥ जब
 श्रीआचार्य जी श्रीगुरु जी के अनकमल में भाव होय ॥ तब यह आश्रय
 सो यह सत्फल है ॥ अव श्रीमद्गोकुल गोप्राण ॥ सो गोकुल के जे प्राण हैं ॥ वे
 सो गो न कर सक श्रीठाकुर जी हैं ॥ गो की सेवा ते श्रीठाकुर जी प्रीति प्रसन्न होत हैं
 श्रीगोना मंडीन को है ॥ सो जे मंडीन को प्राण श्रीपरे ॥ प्राण के आश्रय
 रंदा के आश्रय अननही ॥ तैसे श्रीठाकुरजी के आश्रय गो ठाकुर हैं ॥ श्री
 गोनाम पृथ्वी को है ॥ सो पृथ्वी रूप श्रीपसोदा जी हैं ॥ तिन के प्राण श्रीपशु ठाकुर
 जी हैं ॥ सदा रक्षा करत हैं ॥ घर में जो पदाथ हैं ॥ तिन के श्री ठाकुरजी को विनयो
 कात हैं ॥ श्रीगोनाम ब्रह्मन को है ॥ जो ब्रह्मन को देखे ॥ उनही को आश्रय को
 श्रीगोकुल में तो प्राणी ब्रह्म विराजत हैं ॥ ताते प्राणी माच के जीवन श्री
 ठाकुरजी हैं ॥ सो श्रीगोकुल के आश्रय विना श्रीठाकुरजी को आश्रय न होय

श्रीगोनाम आश्रय को है ॥ जरा श्रीठाकुरजी विराजत हैं ॥ सो आश्रय को है ॥ स
 व भक्तन को नाम गो कहिये ॥ ताते भक्त के दृश्य में श्रीप्रभु सदा विराजत हैं ॥ तो
 भगवद्गो की सेवा आपके ॥ श्रीठाकुरजी के प्राप्ति होय ॥ सो भक्त सेरो मन ब्रजभक्त
 हैं ॥ जिन के प्राण श्रीकृष्ण हैं ॥ सो ब्रजभक्तन के चरान को आश्रय को ॥ सो सब
 उभव होय ॥ ताते श्रीमद्गोकुल गोप्राण करे ॥ अव श्रीमद्गोकुल कामद ॥ जो स
 र्वगोकुल के भेनाथ प्ररन कर्ता श्रीठाकुरजी हैं ॥ श्रीकामधेनु कल्प वृक्ष चिं
 तामारो ये हमेनाथ प्ररन करत हैं ॥ जो पेलो लौकिक कामना प्ररन करत हैं ॥ जो के
 पोये ते अन्यत दुख होय कोले ॥ देवलो क में रंदा जहां रहत हैं ॥ तहां कामधेनु क
 ल्प वृक्ष अमृत पान करत हैं ॥ पंतु अपने राज्य के लोपे अति दुख हो ॥ सो नाग
 वत में प्रसिध है ॥ शससन के मयने रंदा बुद्ध छोड़ ॥ पदार के कदामे श्रित हैं
 ताते इन के पोये ते निभय नही होत ॥ श्रीगो भागवत में जहां स्पमन क मारो
 को प्रसंग है ॥ तहां मारो के लोभने श्रीठाकुरजी सो कभाव धरो ॥ न वसत है ॥ यु
 ज्ये हैं ॥ ताते इन को कामना पूर्ण में अनेक दुख हैं ॥ श्रीगोकुल जो है सर्व
 मनोथ के प्ररन कर्ता ॥ ताप दुख दूर कर स्वस्थान दे को अनुभव कावत हैं ॥ सो
 श्रीगोकुल में रीह ऐसे चिंतामनि को आश्रय को ॥ जो निभय होय सब मनोथ
 प्ररन होय ॥ ताते श्रीमद्गोकुल कामद ॥ १६ नाम भये ॥ सो ॥ श्रीमद्गोकुल
 राकेश श्रीमद्गोकुल तारक ॥ श्रीमद्गोकुल पद्मावली श्रीमद्गोकुल संस्तुतः
 १ ॥ याको अथ ॥ अव श्रीमद्गोकुल राकेश करे ॥ जो राकेश नाम चंद्रमा सो चं
 द्रमा में पेरारो ॥ जो सूर्य को ताप को ॥ अमृत की वृष्टि ते निवर्त का सीवल
 करत है ॥ श्रीगोकुल चंद्रमा प्रभू हैं ॥ सो ब्रज विहा ताप सो संतप होत है
 तब निज अधरामृत को पान कर पसो तल करत हैं ॥ श्रीगोत्रप ताप से
 दुखी जो वगोकुल के चंद्रमा को आश्रय करत हैं ॥ तिन के सर्वतप दूर होत है
 भगवद्गो को संबध होय है ॥ लौकिक चंद्रमा को लाधेन होत है ॥ अभाव सो
 प्रकास नही सूर्य के अंग प्रकास नही ॥ ऐसे अनेक दोष हैं ॥ सो श्रीगोकुल चंद्र
 में नही ॥ जिन को सकार प्रकास है ॥ अखंड ब्रजभक्तन संग लीला करत हैं
 श्रीचंद्रमा को मोदनी को मुख देत हैं ॥ ताते नंद पसो राह को मोदनी छपे ॥ तिन के
 प्रकास कर्ता हैं ॥ ताते श्रीमद्गोकुल राकेश करे ॥ अव श्रीमद्गोकुल तारकः

॥ गोकु ॥ जो श्रीगोकुल श्रीरंग उपासक है ॥ तिनकी गंगा महिमा जानवे ॥ नारायण
 ॥ २५ ॥ देखे ते सो भाको और सुने ते महात्मको पार नही ॥ सो पंचपुराण में कहते हैं ॥ जो श्री
 गोकुल के गाल हमी नाग्यगा कहते हैं ॥ पर पार नही पावत ॥ और बारह उपा
 रा में श्री बास जो सगे व्रज को महात्म्य कहे ॥ पर श्रीगोकुल की लीला कहते
 में अस्तमय है ॥ और जो अन्य देस में रहें ॥ श्रीगोकुल की लीला चिंतन को
 भाव सहित विरह करे ॥ तिनको प्रभू तार संसार सिधते ॥ अपने सनगी
 अनुभव करावते हैं ॥ जैसे अग्नि कुमारी का को भाव भयो ॥ तब उन के उर पर
 करे चा धारि में मनो धी पूरन कीये ॥ ताते जो भाव होय तिनको मनो धी पू
 न करे ॥ ताते श्रीमद्गोकुल तारक कहते ॥ अव श्रीमद्गोकुल पद्मावली ॥ जो
 श्रीगोकुल कमल रूप है ॥ श्रीठाकुरजी सर्वरस को भोग करते हैं ॥ और कमल
 सूर्य को देख फूल तरे ॥ और कमल सदा जल में रहे ॥ सो श्रीगोकुल जोर सदा
 जल है ॥ महा अलौकिक भगवद् महारसरूप जो कबहू नही संखे ॥ तो भेना
 नाना प्रकार के व्रज वसत है ॥ जैसे नंद यशोदा बृद्ध गोपी गोप उच भाव में मग
 रहते हैं ॥ और व्रज भक्तन को रभाव है ॥ एक संयोगात्मक स्वविप्रयोगात्मक
 या प्रकार गोपीजन को पीव भाव सोई नाना प्रकार के कमल हैं ॥ तिनको र
 सपान प्रभू भूषण होय करत है ॥ नंद यशोदा जो को बाल स्वरूप सो सुख देत है ॥
 सरस्वती को गौ चारण में व्रज भक्तन को रस लीला में सुख देत है ॥ ऐसे अ
 लौकिक जल में नाना प्रकार के कमल हैं ॥ सो रस भो धन रूप श्रीठाकुरजी हैं
 ताते श्रीमद्गोकुल पद्मावली कहे ॥ अव श्रीमद्गोकुल संस्तुत ॥ जो श्रीठाकुर
 जी के संगे श्रीगोकुल की स्तुत है ॥ सो श्रीठाकुरजी को अति प्रीति है ॥ सो नाराय
 वली में श्री आचार्यजी भक्त के नाम कहते हैं ॥ नंदन दन यशोदा नंदन गोपीव
 द्य भव व्रज नाथ ॥ ऐसे भक्ति सहित सुत ते भक्त की जान करे ॥ प्रभू वेगरी
 कृपा करत है ॥ सो भागवत में प्रसिद्ध है ॥ देव स्तुत ब्रह्म स्तुत वेद स्तुत सब सो
 मिल व्रज संबंधी स्तुत है ॥ काहे ते श्रीठाकुरजी व्रज भक्तन के रस में मग्न हैं
 सो जब व्रज भक्तन के संबंध सहित श्रीठाकुरजी की स्तुत करें ॥ तब श्रीठाकुर
 जी वरुत प्रसन्न होय ॥ जो भक्तन को नाम लेते ॥ ताते श्रीमद्गोकुल संस्तुत
 या प्रकार ५ श्लोक अथवा २० नाम को निरूपण भयो ॥ अब कहते हैं श्री

श्रीमद्गोकुल संगीत ॥ श्रीमद्गोकुल लास्य कृत ॥ श्रीमद्गोकुल भावात्मा श्री
 मद्गोकुल पोषक ॥ ॥ श्रीमद्गोकुल संगीत ॥ जो संस्तुत
 है ॥ जो में श्रीगोकुल को संबंध है ॥ सो संबंध करे ॥ व्रज की लीला विना श्री
 रगावत है ॥ सो के से वोलन तरे ॥ जैसे दादुर अज्ञान ते रहते ॥ काहे ते श्रीगोकु
 ल की लीला प्रसिद्ध है ॥ श्रीभागवत ॥ जो में श्रीगोकुल को संबंध है ॥ जो
 गान के सुने ते को रीति जीवन को उद्धार होय ॥ ऐसे पादार्थ कृपा विना संस्तुत
 जब पुष्टि मार्ग में सन आर भगवद् रस संग करे ॥ तब गोकुल संबंधी लीला
 को अनुभव होय ॥ ते सांचे गाने ये हैं ॥ जो अष्टछाप योगी वैष्णव उष्टि ली
 ला व्रज लीला कांगो ॥ ऐसे उत्तम रस है ॥ जो श्रीमद्गोकुल संगीत कहे
 अव श्रीमद्गोकुल लास्य कृत ॥ जो लास्य नाम अत्यंत प्रीति को है ॥ जैसे जल श्री
 योन में स्नहते ॥ जल बिना रसन न होरे ॥ ते से ही गोकुल विना श्रीगोकुल होरे
 और अपने भक्तन को हं परीति साहेत है ॥ जो गोकुल में स्नेह को गो तब मेरी आत्मा
 होगी ॥ काहे ते ॥ जो जहां अति रूप मोहित हो रवीन तो कीये ॥ तब प्रभू परीति आजा
 होय ॥ जो व्रज में प्रगट होय ॥ तब सिंगार रस को अनुभव होय ॥ और अग्नि कुमारी
 को श्रीठाकुरजी यह आजा होय ॥ जो व्रज में यह मनो धी प्रो होय ॥ तब श्रीकृष्ण
 को प्रागट होय ॥ या प्रकार सब को सिद्धा होय ॥ जो व्रज के भाव निरामस को
 प्राप्त नही ॥ ताते श्रीमद्गोकुल लास्य कृत कहे ॥ अव श्रीमद्गोकुल भावात्मा ॥ जो
 श्रीगोकुल के भावात्मक स्वरूप है ॥ सो लीन के भाव सो भजन करे ॥ तो पूरन पुरी
 तम को संबंध होय ॥ जो सदा विराजते हैं ॥ सो स्वरूप महारसरूप है ॥ पांचविना
 न रहे ॥ ताते जब मधुरा सो उह स्वरूप श्रीगो ॥ तिन के भीतर स्वरूप रसो ॥ सो अ
 नुरसंग मधुरा पदो ॥ तब व्रज को स्वरूप तो व्रज में होय ॥ पर उह स्वरूप पांचवि
 ना जहां तहां न रहे ॥ ताते बास रूप के पांच व्रज भक्त हैं ॥ ताते व्रज भक्त न के उद
 य में रसो काहे ते ॥ जैसे व्रज भक्त को स्वरूप भावात्मक है ॥ ते से श्रीप्रभू रसात्म
 क है ॥ ते से व्रज भक्त श्रीठाकुरजी के संबंध ते रसात्मक है ॥ ताते दो व्रज में
 स्थिर रहे ॥ सो जा को व्रज भक्तन के भाव सहित जब भावना होय ॥ तब वास्तव
 पको अनुभव होय ॥ ते से पुष्टि मार्ग में श्री आचार्यजी सेवा की रीत प्रगट करे
 तब श्रीकृष्ण को प्राप्त होय ॥ ताते व्रज भक्तन की भावना सो भजन करे ॥ ताते

॥ गेडु ॥ श्रीमद्भोक्तुलजीवात्माकते ॥ अवश्रीमद्भोक्तुलपोषक ॥ जो श्रीगोकुल को गे
॥ २०६ ॥ क श्रीकृष्ण हैं ॥ जे से माता पिता पुत्र को पोषण करते हैं ॥ और श्रीगोकुल में भक्त
 रहते हैं ॥ तो जवाव ससा संत तप होते हैं ॥ नवकार मिस प्रभु उर के घर पधार आ
 न पोषा कहें ॥ और जो जीव अनुपरीत हैं ॥ तिन को सर्व प्रकार पोषते हैं ॥ सो भक्ति
 ब्रह्म में श्री आचार्य जी कहें ॥ बाध समावनाया नु नै कांते वास स्थान ॥ हास
 सर्व तोरक्षा करि स्थिति न संशय ॥ १० ॥ कोहते कोरि जीव बुधते देख करत हो ॥ पाप
 को कोरि जान न नही ॥ तिन को पोषन करत हैं ॥ ताते श्रीमद्भोक्तुलपोषक ॥
॥ चक्र ॥ श्रीमद्भोक्तुल हृदय स्थान श्रीमद्भोक्तुल संवृत ॥ श्रीमद्भोक्तुल हृदय
 श्रीमद्भोक्तुल मोदित ॥ १० ॥ **याको अर्थ ॥** अवश्रीमद्भोक्तुल हृदय स्थान ॥ जो श्री
 भोक्तुल प्रभु को हृदय स्थान है ॥ ताते श्रीगोवर्धन व्रज यमुना तट सारि सब भ
 गवद स्वरूप कहें ॥ और स्वरूप को आजा दे के ब्रह्म द्वारा प्रगट कीये ॥ सो
 श्रीभागवत तट तोय स्वर्ध में प्रसिध है ॥ और व्रज की सामि श्री हृदय ने प्रग
 ट है ॥ कोहते ॥ लीला स्वरूप को सामि श्री में श्री कृष्ण के मन कर दूसरे सत्त्व प्रग
 भयो ॥ सत्त्व स्थिति नते अनेक स्वरूप लीला मध्य पति ॥ सो व्रज में गोप नित्य
 लीला ॥ ताते श्रीमद्भोक्तुल हृदय स्थान कोहें ॥ अवश्रीमद्भोक्तुल संवृत
 जो श्री ठाकुर जो श्रीगोकुल के ली कसंधी वसतें ॥ जो लीला वाती सब गोकुल
 की करत हैं ॥ ऐसे सके समुद्रें जो और कछु नही जानत ॥ और आपने चाधा
 रें में कोहें ॥ जे भरो प्रागमनु मोर लीये ॥ ताते जा को जे सो भाव देखते हैं ते
 सो मनो ये सिद्ध करत हैं ॥ ताते श्रीमद्भोक्तुल संवृत ॥ अवश्रीमद्भोक्तुल
 जो श्रीगोकुल में श्री कृष्ण बैराजते ॥ श्रीनंद पसो दाजी के घर कोहते माया को
 प्रागल रघी पीछे कोहें ॥ ताते यह जाननो जो माया अकेली न भई ॥ तहां कोरि
 करे यह कैसे जाने तहां कहां ते ॥ जो माया अकेली होती सो माया को उपज
 यो इष्ट ॥ श्रीयसोदा जी के स्तन न मरो तो श्रीकृष्ण को अंगीकार करने
 और आप को दर्शन नही होते ॥ कोहते जीव को माया को आचान हैं जि
 तनी माया पू के तितनो दसि न होय ॥ सो जा को जे सो भाव ता को बे सोही द
 र्शन भयो ॥ ताते व्रज को यह भाव भयो ॥ जो यह मारि रक्षा रे गे ॥ सो छिप ली
 ला कर व्रज भक्त को स्वरूपानंद को अनुभव कराय ॥ ताते श्री आचार्य जी

भावाप्रकाचने दराय जी के घर की गिन प्रगट ॥ मयोदस सलित ता के भीरु और
 भागे व्रज भक्तन के रित भावना सो प्रगट करी ॥ ताते भगवद्गीता ये ॥ मक्ति गो
 कुलने प्रगट भई ॥ ताते श्रीगोकुल के आश्रय विना जोर भक्ति न होय ॥ यवचने
 सदा सवोत्पन्न सो श्री भगवान् गोकुल सार ॥ स्मृत्यो गोपिका यदो कोइ न च
 दावेन स्थित ॥ ११ ॥ ऐसे श्रीगोकुल पीत सदा विदमकरतें ॥ निनने पुष्टि सको
 अनुभव होय ॥ ताते श्रीमद्भोक्तुल दकुष्ट कहें ॥ अव कहें श्रीमद्भोक्तुल मोदित
 जो श्रीगोकुल के आनंद दाता श्रीकृष्ण हैं ॥ जाहि न वै कुंठे ते गोकुल पधार ता
 दिन ते भक्तन के दुरवद ॥ और नो धर्मि भय ॥ सब अपनो जन्म साधक जान
 नित्ये करत हैं ॥ और यमुना जी मग होय रस धार बहावतें ॥ और गो आनंद सो द
 धरम वहुत वडो ॥ रवाल अंगार का कामी और दर्शन को आवतें ॥ और व्रज
 भक्त मग होय मंगला साज दसि न करय सो दाघ जानतें ॥ ऐसे श्री ठाकुर जी घर
 घर आनंद कीये ॥ ताते श्रीमद्भोक्तुल मोदित ॥ कोहें ॥ **॥ चक्र ॥** श्रीमद्भोक्तुल
 पीस श्रीमद्भोक्तुल स्नातः ॥ श्रीमद्भोक्तुल भोग्य श्रीमद्भोक्तुल सर्व कृत ॥ १२ ॥
॥ याको अर्थ ॥ अव कहें श्रीमद्भोक्तुल गेपीस ॥ जो श्रीकृष्ण को कुल श्री सोपी
 जन के रसे ॥ कोहते ॥ जहां तरि श्री कृष्ण वै कुंठे ते गोकुल न हो पधार ॥ तहां तरि
 श्रीगोकुल अपनो महात्म नही जानतो ॥ सो यह पति वृता को धर्म हो ॥ अपनो च
 तुराई तत्काल प्रसिध करत हैं ॥ और नाना प्रकार के संकेत प्रभु और भक्तन सां
 होत हैं ॥ श्रीगोकुल प्रभु को और भक्तन को अति अनुकूल ॥ ताते श्रीगोकुल
 प्रीय है ॥ ताते श्रीमद्भोक्तुल लालिस ॥ कोहें ॥ अव कहें श्रीमद्भोक्तुल भोग्य श्री
 जो जे से वै कुंठे ॥ उरय भक्त लक्ष्मी ॥ ताको भोग्य रापा कहतें ॥ और श्रीगो
 कुल व्यापि वै कुंठे ॥ तहां आप भोग्य करतें ॥ ताते श्रीगोकुल को सब लक्ष्मी
 लजा पावत है ॥ सा सदा लक्ष्मी नारायण वै कुंठे ॥ व्रज को लीला को स्मरण
 करतें ॥ तथा और और तार अस कला कर के ॥ सो ते मेरी तिन को भोग्य
 वे में भोग्य भक्त ॥ श्रीगोल में साक्षात् पूरन प्रहो तम लीला कसे पधार
 नाते श्रीगोकुल के व्रज भक्त उछे ॥ सर्व सामि श्री भोग्य उतें ॥ सो सामि श्री श्री
 गोवर्धन श्रीयमुना सां पुष्टि मरा स्वरूप ॥ तहां अने कथ कलता पुष्टि
 व्रज भक्त सो मायमान हैं ॥ कामे राव देख के लजा पावतें ॥ लक्ष्मी पुन्याय

गोकुल ॥ रहोहें श्री श्रीपुननाजीकेसोभादेख श्रीसुखलुभाउ रहे हैं ॥ तातेजीभोगये
 ॥ १२०५ ॥ प्रभु व्रजभक्तनसंग गोकुलको सोहार कामेनारी ॥ कोरते कहें ॥ १२०६ ॥ जाय
 नो कहें चपदानी ॥ ऐसो रज्यस्थलहे ॥ उहां मयीहरीनसोमनीलारे ॥ ताते श्रीगो
 कुलकीलोला व्रजभक्तनको भाव बरस भोग कइ नहीरे ॥ ताते श्रीमद्गोकुल
 भोग्य श्रीकेरु ॥ अब कहें श्रीमद्गोकुलसर्वकृत ॥ पानाममें तो अनेकभावहे ॥
 कोरते सर्वलोला श्रीगोकुलजीकीयेहे ॥ सोसर्वलोला व्रजभक्तनको करि साप
 ताते व्रजभक्त १ श्रीकृष्णजीको भजनकीये ॥ जोपरमारी प्रथापरे ॥ श्रीगो
 लोला श्रीगोकुलमें व्रजभक्तनसंगकीये सो कहें नहीरे ॥ ताते ज्योपियै कुहमें
 जोलोलाकरतहे ॥ सो आप्रणीउयोतम व्रजमें प्रगट होय के ॥ श्रीयमुनातर
 अनेकलोला करतहे ॥ सोलोलासोपरहे ॥ सो व्रजभक्तनके चरनन कीउ
 के आश्रयते प्रगट होय ॥ सोउह आश्रयसिधरोइ वेकीजोग्यता श्रीआश्रय
 के चरनकमलके आश्रयते होइ ॥ ताते सर्वभाव को गोकुलकीखिलाचन
 काजो ॥ सो श्री आचार्यजीकेहेहे ॥ सर्वदासर्वभावेन भजनोपां व्रजाधिप
 स्वस्यायमेवधर्मो नान्यदपि कदाचन ॥ १ ॥ पानधर्मसर्वपर यहीहे ॥
 हलीपुर्वीतममें भावसो लोला को अनुभवकना ॥ ताते श्रीमद्गोकुलस
 कृतके ॥ पाप्रकार ८ श्लोकके अर्थभयो ॥ अथ गोकुलाष्टकके पादको
 लकतहे ॥ सो ॥ इमानि श्रीगोकुलेश नामानि वदने मम वासंतस्ततं
 चैव लीलां हृदये सदा ॥ १ ॥ याको अर्थ ॥ यह जो श्रीपूजापुर्वीतमके नामलो
 लासहित श्रीगोकुल संबंधी ॥ सो श्रीगुसांजीकेहे जो मेरे कमलमुख नाम
 संतत जो निरंतर वास करो ॥ कोहे सो ॥ में सर्व साधन कर रहित हो ॥ ताते पर
 जो नामहे ॥ तिनको मेरी रसना अष्टप्रहर स्मरणको ॥ सो जन नाम के चिंतन
 श्रीकृष्णलोलासहित मेरे हृदयमें वास करे ॥ ताते पेनाम बाहार उचरत
 याको श्रीभ प्राययेर ॥ जो मेरे उरमें यह मनोष्ये ॥ जो अंगार रस सोलो
 लासहित श्रीस्वामिनीजी संग निकुंजमें बिहार करतहे ॥ सो लोला मे
 उरमें बसे ॥ सोइसकलापूरी श्रीकृष्ण सोइस अंगारपूरी श्रीस्वामिनीजी
 ताते में यद ३२ नाम कर गोकुलाष्टकीये ॥ सोपे नाम सर्वलोला संबंधी
 सो इनके आश्रयते सर्वलोलाको अनुभव होपगे ॥ याप्रकार श्रीगुसांजी

तिहाकी गोकुलाष्टक आठ कीये ॥ यह अपने से बदनको यह जतोये
 जो प्रागोकुलाष्टकको पाठको ॥ श्रीरत्न नामनको हृदये मरावे ॥ इन नामने
 आश्रयते पूरा पुर्वीतम अष्टलीलासहित हृदयमें आस वसेंगे ॥ जो श्रीरत्न
 जो श्रीआचार्यजी श्री श्रीगुसांजीको चरनको नमस्कार करतहे
 जैसे मेरी बुद्धिमें महा प्रभुके अनुग्रह ते स्फुरत भरे ॥ सोमंको ॥ कोहेने ॥ फजो
 सिंगार रसात्मक ३२ नामनेमें अपार भावहे ॥ सो श्रीगुसांजीके हृदयमें स
 दास्थितहे ॥ सो जो को प्राप्तिने नो वहुत दुल भरे ॥ ताते पागोकुलाष्टक के
 पाठते ॥ अनेक हृदयमें अविद्याहे ॥ तिनको इकर सतीत्य भाव होय ॥ ऐसे
 प्रताप श्रीगोकुलाष्टक के नामकोये ॥ ताते वैष्णवको पायंयको भाव सांत
 पाठको ॥ कोहेने ॥ श्रीगुसांजीके वचना मृत मरार सत्त्व ॥ गोकुलाष्ट
 कोहे ॥ रसरूप ताते गोप राखे ॥ ताते उनको रूपते वंगरो फलित होय ॥
 रीत श्रीवद्वभाचार्य विरोचन ॥ रंग्य कीटी का भावा में संग ॥ गुमन

सर्वोपजी	१२१
व्रजभाष्टक	२०
स्फुरत कृष्ण	२६
नामरत्नारव	४५
यमुनाष्टक	५४
दीनबाध	६०
सिंधुतर रस	७५
सिद्धतमुक्तानक	७८
पुष्टप्रवाह मयीदा	८२
नररत्न	११३
अतकरण प्रबोध	११८
विवेकधेकीष्टक	१२१
कृष्णप्रथ	१२३
जनुश्रीव	१३१